इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अरावणः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-37 सितंबर अंक-8

महर्षि दयानन्द सरस्वती

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp3@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

ऋषि ने हमें वेदों से जोड़ा हम ऋषि से जुड़े

वेद परमपिता परमात्मा की वाणी है। सृष्टि के आदि में दयालु प्रभु ने अपने ज्ञान को ऋषियों के हृदय में दिया। ऋग्वेद दिभास्य भूमिका में ऋषि लिखते हैं कि वेद किसने उत्पन्न किया? उत्तर- सत् जिसका कभी नाश नहीं होता, चित्त जो सदा ज्ञान स्वरूप है। जिसको अज्ञान का लेश भी कभी नहीं होता। आनन्द जो सदा सुख स्वरूप और सबको सुख देने वाला है। इत्यादि लक्षणों से युक्त पुरूष जो सब जगह में परिपूर्ण हो रहा है। जो सब मनुष्यों को उपासना के योग्य इष्टदेव और सब सामर्थय से युक्त है, उसी परब्रह्म से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ये चारों वेद उत्पन्न हुए। इसलिये सब मनुष्यों को उचित है कि वेदों का ग्रहण करें और वेदोक्त रीति से ही चलें। वेद पर ऋषि की पूर्ण आस्था थी। यदि दयानन्द देह है तो वेद उसका आत्मा है। वेदों का अस्तित्व तो दयानन्द से पहले भी था परन्तु उस तक पहुँच किसी की न थी। जैसे ही दयानन्द को वेद रूपी कसौटी हाथ लगी, एक ही झटके में संसार की स्थिति को पलट और उद्घोष किया- "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है" ऋषि ने पूर्ण विश्वास के साथ कहा कि ईश्वर का किया उपदेश जो वेद है उसके बिना किसी मनुष्य को यर्थाथ ज्ञान नहीं हो सकता।

हमारे पास जो ज्ञान है वह हमने दूसरों से सीखा है। इसी प्रकार हमारे माता-पिता और गुरूओं ने दूसरों से शिक्षा ली। इसी सिलसिले को यदि आगे तक बढ़ाते चले तो सृष्टि के उस आदि

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	अग्नि की स्थापना	2
4.	अंधविश्वास-निर्मूलन	10
5.	हनुमान, अंगद और ब्रह्मचारी	21
6.	हैदराबाद के जननायायक	25
7.	आया है, वैदिक सिद्धांतो	27
8.	समाचार	30

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

सितम्बर

विद्वान् अतिथि की सेवा

तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ बलिमग्ने
अन्तित ओत दूरात्।
आ भन्दिष्ठस्य सुमतिं चिकिद्धि बृहतें
अग्ने महिशर्म भद्रम्॥

(ऋग्वेद 5/1/10)

पदार्थ- (**यविष्ठ**) हे अतिशय युवा और (**अग्ने**) ज्ञान- प्रकाश से युक्त विद्वान्। आप (**अन्तित:**) समीप से (**उत**) और (**दूरात्**) दूर से आकर हमें सदुपदेश करो। हम (**क्षितय:**) गृहस्थ मनुष्य (**तुभ्यम्**) आपकी लिए (**बलिम्**) उत्तम भोजन को (आ, भरन्ति) अच्छे प्रकार धारण करते [भन्दिष्ठस्य] सर्वश्रेष्ठ आचरण करनेवाले की (**सुमतिम्**) उत्तम बुद्धि को (**आ, चिकिसिद्ध**) अच्छे प्रकार जानिये और हमें जगाइये (**ते**) आपके लिए (**बृहत्**) बड़ा (**महि**) सत्कार के योग्य और (**भद्रम्**) कल्याणकारी (**शर्म**) सुख प्राप्त हो॥

भावार्थ- तपस्वी विद्वानों को समीप और दूर-दूर जाकर वेद-विद्या का उपदेश करना चाहिये। अन्य सब मनुष्यों को ध्यानपूर्वक उनके ज्ञानोपदेश को सुनना और अपने आचरण में उतारना चाहिये तथा ऐसे विद्वानों का सब प्रकार सत्कार और उनकी सेवा करने-कराने चाहिये।

काव्यरूपान्तरण-

हे विद्वज्जन! निकट-दूर से,
आप हमें उपदेश करो।
सेवा कर हम पुण्य कमाएँ,
अन्न, मान को ग्रहण करो ॥ 1 ॥
हे विद्वज्जन! हम गृहस्थों को,
श्रेष्ठ आचरण सिखलाओ।
शुभ कर्मों का ज्ञान करा दो,
आप बहुत से सुख पाओ ॥ 2 ॥

■

अग्नि की स्थापना से आत्मविश्वास

लेखक- देव शर्मा, वेदालंकार, नई दिल्ली

पिछले अंक का शेष...

दीपक जलाने के पश्चात् अग्नि की स्थापना करनी है। यजमान कहता है– अग्निमादधे– अग्नि की स्थापना करता हूँ।

प्रश्न– वे अग्नि की स्थापना किस लिए करें?

उत्तरः यज्ञ करने वाले को यजमान कहते हैं। जिसका एक नाम होता भी है, जिसका अर्थ कल्याणकारी पथ पर चलने के लिए सुन्दर मार्ग तैयार किये हैं। उन मार्गों को जानकारी लोगों तक न पहुँचाना न उन्हें प्रेरित करना, अग्नि को बुझाना है। यदि कोई बच्चों को अच्छी पुस्तकें पढ़ने, सत्संग में जाने के लिए प्रेरित करे और आप यह कहकर हतोत्साहित कर दें कि इनके पास तो समय ही नहीं है तो आग को बुझाने में सहायक हो रहे हैं।

प्रश्नः अग्नि का स्वरूप क्या है?

उत्तरः इस मन्त्र में हमें अग्नि की विशेषता बताने वाले दो विशेषण प्राप्त होते हैं। पहला है अन्नादम् जिसका अर्थ है अन्न को खाने वाली। अर्थात् पका हुआ अन्न ही इसका भोजन है और कुछ नहीं है जो जिसका भोजन है वह उसको पाकर ही स्वस्थ रहता है तथा संसार को लाभान्वित करता है। एक होता है आमाद जिसका अर्थ है कच्चा। जिसे अग्नि में नहीं डाल सकते हैं। दूसरा क्रव्याद होता है, जिसका अर्थ अयोग्य होता है। न डालने योग्य चीजें अर्थात् अन्न भी यदि घुन लगा हुआ हो सड़ा हुआ है तो उसे भी अग्नि को नहीं देना चाहिए। इसलिए परमपिता परमात्मा ने यज्ञ की अग्नि को अन्नादम् कहा है। यजमान भी ऐसी ही अग्नि की स्थापना का व्रत लेता है।

इस अग्नि को दूसरा नाम अन्नाद्याय प्रदान किया गया है। जिसका अर्थ है अन्न को पचाने में समर्थ अर्थात् इसके पास वह शक्ति है जो पदार्थों को खाती है पचाती है ओर ऊर्जा में बदल देती है। लौकिक एवं यज्ञाग्नि यद्यपि बाह्य रूप से एक समान प्रतीत होती है। परन्तु ऋषि यज्ञाग्नि के वैशिष्टय को स्वीकार करते हैं। यह प्रतिपल हमारे परिवार की रक्षा करता है। आसुरी वृत्तियों को जो परिवार का विघटन करती हैं उन आसुरी वृत्तियों का विनाशक हैं यह जठराग्नि (पाचन क्रिया) को प्रदीप्त कर दोषों को दूर करने में समर्थ है। यह अग्नि प्राण की अग्नि को जगाकर, बह्मतेज को बढ़ाकर अन्तःकण को आलोकित कर देती है। वेदी पर बैठे हुए निष्काम भावसे भजन करने वाले होता अग्नितेज के प्रतीक हैं। अग्नि में दी गयी दिव्य आहुतियाँ

विश्वकल्याण में निरन्तर योगदान करती हैं। अग्नि ही हवि स्वरूप वस्तुओं को ग्रहण कर यजमान के लिए बदले में सकल ऐश्वर्य प्रदान करता है।

प्रश्न: अग्नि वस्तुओं को ऊर्जा में कैसे बदलता है?

उत्तर: ऋषियों ने पदार्थ विद्या को जानने व समझने और उससे उपयोग लेने पर बहुत बल दिया है। पदार्थ विद्या जाने बिना कोई व्यक्ति इस सृष्टि को भी नहीं जान सकता है और न ही इससे लाभ हो सकता है? अग्नि सभी पदार्थों में प्रमुख पदार्थ है। ऋग्वेद का ज्ञान जब ऋषि के अन्तःकरण में अवतरित हुआ तो उन्होंने सर्वप्रथम 'अग्नि' शब्द का ही उच्चारण किया और अग्नि की ही स्तुति करने का भगवान् का संदेश लोगों तक पहुँचाया। 'अग्निमीथे'- मैं अग्नि की स्तुति करता हूँ। स्तुति का अर्थ गुणों का वर्णन करना है अर्थात् अग्नि के गुणों को गाता हूँ। अग्नि सब का हित चाहता है, अग्नि परोपकारी है विनाशक नहीं, यज्ञ का देव है। यज्ञ में ऋत्विज है होता है अर्थात् लेने व देने वाला है। ऐश्वर्या को देने वाला है। यह दूत है। यजमान की दृष्टि को देवताओं के पास ले जाने वाला है।

अग्नि का स्वरूप 'पचाना' है। जो भी वस्तु हम अग्नि को देते हैं, अग्नि उसको पचा देती है। पचा हुआ अन्न ही ऊर्जा में परिवर्तित होता है, और ऊर्जा का स्वरूप सूक्ष्म होता है। हल्की वस्तु वातावरण को शीघ्र प्रभावित कर लेती है।

प्रश्न: अग्नि पदार्थों को ऊर्जा में कैसे बदलती है? क्या कोई परीक्षण किया गया है?

उत्तर: कुछ परीक्षण तो ऐसे हैं जिनसे सभी भली-भाँति परिचित हैं। जैसे एक छोटा सा मिर्च का टुकड़ा अग्नि में डाल दें तो आस पास के लोगों को यह पता चल जाता है कि किसी ने मिर्च को अग्नि में डाल दिया है। अग्नि के सम्पर्क में आयी एक छोटी सी मिर्च कितनी प्रभावशाली हो जाती है। गरम घी के सम्पर्क में आने पर थोड़ा सा हींग, जीरा, जायफल, जावित्री घर को सुगन्ध से भर देती है। माँ प्रतिदिन यह परीक्षण करती है। क्या यह अग्नि का प्रभाव दिखायी नहीं देता है और यदि यह परिवर्तन दिखायी देता है तो अग्नि में घी व सुगन्धित पदार्थ डालने पर उत्पन्न होने वाला प्रभाव भी दिखायी देना चाहिए। यही चीजों को ऊर्जा में बदलने का तरीका है।

प्रश्न: अधिकतर लोग इससे सहमत क्यों नहीं होते?

उत्तर: इससे कोई भी असहमत नहीं हो सकता है। और यदि वह ऐसा करता है तो यह निश्चित रूप से समझ लेना चाहिए कि वह ''पदार्थ विद्या'' को समझना ही नहीं चाहता है।

आज अधिकतर लोग इसको झुठलाने में या इस ओर ध्यान न देने में अपने आपको गोरवान्वित समझते हैं। पर वे यह भूल जाते है कि अग्नि के द्वारा दी जाने वाली ऊर्जा को अभाव में वे कितने कमजोर, रोगी, दुःखी, असहाय और अकेले होते जा रहे हैं। क्रोध करना, अपमान करना, कष्ट पहुँचाना, धोखा देना, खाने की वस्तुओं में मिलावट करना, एक साधारण सी बात बन गयी है। ऐसे समाज में क्या कोई सुखपूर्वक जी सकता है? यह ऊर्जा ही इस ब्रह्माण्ड को तथा पिण्ड को (शरीर) को ऊर्जावान् बनाती है। महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं- हवन यज्ञ करते हुए जो आहुतियां अग्नि में डाली जाती हैं। उनके दो सूक्ष्म रूप बनते हैं। अग्नि द्वारा आहुतियों का पहला सूक्ष्म रूप तो वह है जो सर्वत्र भूमण्डल में फैल जाता है और सारे आकाशीय देतताओं- सूर्य, चन्द्र इत्यादि और पृथ्वी के पदार्थों को शक्ति देता है। दूसरा सूक्ष्म रूप आहुति देने वाले के हृदय में प्रवेश कर जाता है।

यह अग्नि गन्धर्व हैं यजुर्वेद के एक मन्त्र में इस रहस्य को प्रकट किया गया है- यहाँ गन्धर्व एक ऐसा व्यक्तित्व निरूपित किया गया है जो सर्वदा एक ऐसा व्यक्तिव निरूपित किया गया है जो सर्वदा सत्य चिन्तन एवं 'सत्याचरण' को ही सहन करता है। सत्यलोक में ही निवास करता है, उसकी वाणी अप्सरा औषधियों के समान तीनों तापों को नष्ट करने वाली है। वस्तुतः ऐसा अग्नि के समान मनुष्य पृथ्वी को धारण कर सकता है।

अग्नि की ऊर्जा से ही व्यक्ति गन्धर्व बन सकता है। इसलिए अग्नि को गन्धर्व कहा गया है, गन्धर्व का अर्थ है- पृथ्वी को धारण करने वाला। भगवान् वेद के माध्यम से हमें समझाते हैं कि यह पृथ्वी मैंने आर्यों को दी है। अर्थात् जिनके जीवन में गति है, प्राप्ति है जो अपने लक्ष्य को पाने तक रुक नहीं सकते हैं वे ही इस पृथ्वी को धारण करते हैं। सत्य, ऋत, बृहत्, उग्र, दीक्षा, तप, बल, ओज आदि पृथ्वी को धारण करते हैं। अग्नि की स्तुति करने वाला व्यक्ति इन सभी शक्तियों से युक्त हो जाता है। वह अग्नि के समान ही प्रकाशित मनुष्य पृथ्वी को धारण करता है।

प्रश्नः क्या यह अग्नि मिर्च व मांस को भी खाती है पचाती है और ऊर्जा में बदलती हैं?

उत्तरः अग्नि का कार्य ऊर्जा में परिवर्तित करना है इस ब्रह्माण्ड को ऊर्जावन् बनाना है। सभी प्राणी इस ऊर्जा का भक्षण करते हैं। उनकी वह ऊर्जा निर्माण कार्यों में, सुख, शान्ति तथा आनन्द में लगती है, लोगों के कल्याण में लगती हैं, उनका जीवन-स्तर सुधारने में लगती है। यदि हम उस अग्नि को मिर्च खिलाएं तो वह उसे जिस

ऊर्जा में बदलेगी क्या हम उसको सहन करने में सक्षम हैं इसी प्रकार मांस भी नहीं डाल सकते है। एक तो वह कव्याद है जिसे अग्नि खाने में सक्षम नहीं है। दूसरे यदि कोई मांस डालता भी है तो वह ऊर्जा का अर्थ जीवन प्रदान करने वाला। इसलिए इस यज्ञ की अग्नि को "अन्नाद्म" अन्न को ही खाने वाली कहा गया है।

प्रश्नः जो अग्नि पके हुए अन्न को खाती है और उसको ऊर्जा में बदल देती है उसकी स्थापना कहाँ करें?

उत्तरः सीधा सा उत्तर है पृथ्वी पर करें। पृथ्वी को 'नाभि' कहा गया है। और उसमें अग्नि की स्थापना को उल्लेख किया गया है- इस यज्ञ को भी ब्रह्माण्ड की नाभि कहा गया है। पृथ्वी भी नाभि है और यह वेद भी नाभि है। जैसे हमारे शरीर में नाभिस्थान यद्यपि उदर के ऊपरी भाग पर है परन्तु वह कुछ गहराई लिये होता है। पृथ्वी के ऊपर नाभि के समान कुछ गहरे स्थान पर अग्नि को स्थापित करें। इसलिए इस पृथ्वी को वेदी कहा गया है। क्योंकि तीनों लोकों में जीवों के रहने के लिए एक बहुत उपयुक्त स्थान है। इसलिए ऋषियों ने इसे "देवयजनि" के नाम से पुकारा है। देवता लोग इसकी पीठ पर यज्ञ करते हैं। वैसे तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में यज्ञ चल रहा है। परन्तु तीन लोकों (पृथ्वी, अन्तरिक्ष, द्यु) में जो अग्नि प्रतिनिधि रूप में है वह भौतिक अग्नि ही है, जो इस पृथ्वी लोक पर विद्यमान है। इसके ठीक रहने पर ही अन्य लोकों की अग्नि ठीक रह पाएगी।

सृष्टि में होने वाले अनेक महापुरूषों ने समय-समय पर इस परम्परा का निर्वाह करके अपना योगदान प्रदान किया है और इसी पृथ्वी के देवयजनि स्वरूप को सुरक्षित रखा है। प्राचीन काल में ऐसे ऋषि भी हुए है जिन्होंने यज्ञ को करने में अपना सर्वस्व आहुत कर दिया। रामायण काल में देवयजनि राक्षस भूम बनती जा रही थी। महर्षि विश्वामित्र ने श्रीराम और लक्ष्मण को लेकर यज्ञों की रक्षा कर फिर से इस भूमि को देवयजनि ही बना दिया। महाराज अश्वपति की घोषणा "नानाहिताग्नि" (मेरे राज्य में कोई ऐसा नहीं है जो अग्नि की स्थापना नहीं करता) इस बात की पक्षधर है। भगवान् श्रीकृष्ण भी इस यज्ञ के महान् समर्थक रहे है- सब यज्ञ करने वाले यज्ञशेष रूपी अमृत खाते हैं। इसलिए सनातन ब्रह्म को प्राप्त होते हैं। हे अर्जुन ! यज्ञ न करने वाले को यही लोक प्राप्त नहीं होता तो परलोक किस प्रकार प्राप्त होगा?

यह भूमि देवताओं की भूमि है। इसका अभिप्राय है कि मनुष्य देव बनकर दिखाये। मानव योनि प्राप्त कर लेना और यह कह देना कि मानव योनि दुर्लभ है सर्वश्रेष्ठ है। यह तब तक अधूरी है जब तक मनुष्य देव नहीं बन जाता है

और इस भूमि को ''देवयजनि'' नहीं बना देता है। देवता किसे कहते हैं? साधारण भाषा में- जो लेता ही लेता है, देता कुछ नहीं वह राक्षस है। जो लेता है उससे अधिक देता है। वह देवता है।

प्रश्नः अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि वेदी में स्थित तीन मेखलाएँ तीन लोकों की ओर संकेत करती हैं परन्तु मन्त्र में ''पृथ्वी ओर द्युलोक'' का ही वर्णन आया है?

उत्तरः पृथ्वी लोक और द्युलोक परस्पर सम्बद्ध हैं जैसे शरीर और मस्तिष्क । स्वस्थ में ही स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है और स्वस्थ मस्तिष्क शरीर को स्वस्थ बनाए रखता है। जैसे माता-पिता का सम्बन्ध है वैसे ही द्युलोक पिता ओर पृथ्वी माता है मस्तिष्क और शरीर के सम्बन्ध से जीवन उत्तम बनता है। माता-पिता के सम्बन्ध से संतान उत्तम बनती है। उसी प्रकार पृथ्वी ओर द्युलोक के सम्मिलित होकर कार्य करने से दुर्भिक्षा आदि का भय नहीं रहता है। द्युलोक पृथ्वी हिंसित नहीं होते हैं, उसी प्रकार मेरे सुख भी शरीर और मस्तिष्क के मिले हुए होने के कारण हिंसित नहीं होते, भयभीत नहीं होते प्राण भय से हिंसित होते हैं। भय शरीर को हिंसित करते हुए मस्तिष्क को भी समाप्त कर देता है।

इस मन्त्र में एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात उभरकर आती है। कि ब्रह्माण्ड मे पृथ्वी और द्युलोक के ठीक रहने पर जीवन है उसी प्रकार पिण्ड में शरीर और मस्तिष्क के ठीक रहने पर ही जीवन हैं और दोनों को ठीक रखने के लिए अग्नि की स्थापना की जाये।

प्रश्नः अग्नि की स्थापना कहाँ करें?

उत्तरः अग्नि की स्थापना वेदी में करें।

प्राचीन वैज्ञानिकों (ऋषि-मुनियों) ने अग्नि को एक व्यवस्थित रूप दिया। अग्नि कहाँ सुरक्षित रह सकती है तथा उससे उपयोग कैसे लिया जा सकता है? इन सभी बातों पर विचार किया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि अग्नि वेदि में ही सुरक्षित ओर उपयोगी रह सकती है।

शतपथ ब्राह्मण में ''पृथ्वी को ही वेदी जानो।'' ऐसा कहा गया है। अब प्रश्न होता है कि यह वेदी क्या है? इसकी विशेषता क्या है? वेदी एक कुण्ड है जिसका एक निश्चित आकार-प्रकार होगा। जिसके नीचे ओर ऊपर के भाग में 1:4 का अनुपात होगा जिसमें अग्नायाधान आदि कर्म तथा हवि प्रदान की जाती है। कुण्ड के समीप के प्रदेश को भी वेदी कहा जाता है। इसकी विशेषता है कि इसमें अग्नि खा लेती है, पचाती है और उसे ऊर्जा में परिवर्तित कर देती है। दूसरी विशेषता- यह है कि इस वेदी को चारों ओर से तीन मेखलाओं से बाँधा जाता है। जो जीवन को उन्नत कर ब्रह्म की ओर ले जाने में सहायक है। प्रथम मेखला-भूः बताती है कि मैं पृथ्वी से अन्तरिक्ष की ओर चलूँ। द्वितीय

मेखला- भुवः बताती है- अन्तरिक्ष से द्युलोक को प्राप्त करूँ। तीसरी मेखला बताती है- द्युलोक से भी परे की स्थिति आनन्द एवं ज्योति की है। इस वेदी की संरचना से ऐसा प्रतीत होता है मानो एक छोटा सा माडल बनाकर पूरे ब्रह्माण्ड को समझाया गया हो। इस वेदी में अग्नि की स्थापना की जाती है।

इस प्रकार यह पता चलता है कि विधिवत् बनी वेदी में ही अग्नि सुरक्षित एवं उपयोगी रह सकती है। इसके अतिरिक्त अग्नि का अव्यवस्थित रूप भी सामने आया। लोग इस अग्नि को वेदी में न जलाकर बाहर जलाने लगे। होली, लोहड़ी आदि कुछ ऐसे पर्व हैं जिन पर अग्नि जलायी है। इस प्रकार अग्नि के विकृत एवं अव्यवस्थित रूप सामने आये। लोक इनको इसी प्रकार मनाने के लिए बाध्य होने लगे। इस प्रकार अग्नि का स्वरूप बिगड़ता चला गया। परिणामस्वरूप परमाणु बम्ब, हाइड्रोजन बम्ब इत्यादि मानवता के विनाशक हथियार बनाये गये। क्योंकि इन लोगों ने अग्नि को व्यवस्थित करना, उपयोगी बनाना, वेदी में उपस्थित करना नहीं सीखा।

इस मन्त्र से इस वेदी को दो विशेषणों से समझाने का प्रयास किया है। एक-पृथिवी वरिम्णा, दो-धौरिव भूम्ना-यह वेदी पृथ्वी लोक एवं द्युलोक के समान सुन्दर है। पृथ्वी को वेदी के समान बताया गया है- जितनी वेदी उतनी ही पृथ्वी।

प्रश्नः वेदी की सीमा क्या है?

उत्तरः वेदी पर बैठकर हमारी भावना शुद्ध होती है ओर सर्वश्रेष्ठ मंगलकार्य, पुण्यकार्य करने की प्रेरणा प्राप्त है जिसके द्वारा अशुभ चिन्तन, अशुभ कर्म, अशुभ बोलना, दुःख, दुर्व्यसन दुर्गुण का नाश होता है। अकाल, अविद्या, अन्याय का उन्मूलन हो जाता है। ऐसे विचारों एवं कार्यों से ओत-प्रोत होकर ही वेदी पर बैठना उसकी सीमा है। यह वेदी धन ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाली, श्रेष्ठ कामनाओं को पूर्ण करने वाली है। इसको इस प्रकार भी कह सकते हैं यज्ञ विष्णु है, यज्ञ कामधुक्- सभी इच्छाओं को पूर्ण करने वाला है।

प्रश्नः पृथ्वी की सीमा क्या है?

उत्तरः शतपथ ब्राह्मण का यह वचन बताता है कि वेदी के समान ही पृथ्वी है। यह पृथ्वी ऐश्वर्यों से परिपूर्ण है, प्राकृतिक सौन्दर्यों से सुन्दर है। सभी सुख के साधन हैं। विज्ञान व राज्यादि का सुख मनुष्यों को प्रदान कर सुखी करती है। औषधियों, वनस्पतियों, फलों, शाक, सब्जियों की उत्पत्ति स्थल है, परन्तु क्या यह सब कुछ पृथ्वी के लिए है? नहीं, यह सब कुछ पृथ्वी पर रहने वाले जीवों के लिए है। इस विवेचन से एक बात पूरी तरह स्पष्ट हो गयी है कि जो कुछ वेदी पर बैठकर प्राप्त होता है वह सब कुछ पृथ्वी पर

रहते हुए भी प्राप्त होता है।

प्रश्नः यह बात समझ में नहीं आयी कि ''यह पृथ्वी उतनी ही है, जितनी वेदी है।'' वेदी तो छोटी सी होती है और पृथ्वी बहुत बड़ी है। इस पर होने वाली वस्तुएं भी बहुत है परन्तु क्या वे मेरी बन सकती हैं या मैं उनसे लाभ ले सकता हूँ।

उत्तरः हाँ लाभ ले सकते है। बशर्ते आपको इस छोटी सी वेदी पर बैठना होगा। आप जब वेदी पर बैठते हैं तो आपको विचारना होगा कि आपके अन्दर कैसे भाव जागरित होते हैं? आप कहेंगे कि शायद ही कोई ऐसा अभागा होगा जो वेदी पर बैठा हो और उसके विचार अच्छे न हों। वेदी पर बैठकर तो शिव संकल्प होते हैं, प्रार्थनाएं होती है 'ओउम्' का उच्चारण स्वाहा-स्वाहाकार, इदन्न मम (यह मेरा नहीं है) के उच्चारण से वेदी गुंजायमान होती है। बस आपको इन्हीं विचारों, भावनाओं प्रार्थनाओं व उच्चारणों से ओत-प्रोत होकर इस पृथ्वी पर रहना है भले ही आप पृथ्वी के किसी भी कोने में रहे? फिर से सारे पृथ्वी के लाभ आपके होंगे।

प्रश्नः हम अनेक ऐसे लोगों को देखते हैं जो वेदी की स्थापना भी नहीं करते, न ही वेदी पर बैठते हैं, फिर भी उनके पास अनेक पृथ्वी पर प्राप्त होने वाले लाभ हैं?

उत्तरः देखने से ऐसा लगता है कि उनके पास बहुत कुछ है। परन्तु क्या उनका धन, राज्य, विद्या, सन्तान, औषधी वनस्पतियां शिव संकल्प वाली हैं सभी प्राणियों के लाभ के लिए है। सभी सुखी हो, ऐसी भावना से ओत-प्रोत है। त्यागपूर्वक भाग करने वाली है। यह मेरा नहीं प्रभु आपका है। क्योंकि जो ऐसा सोचते हैं, मानते हैं? वे तो सब कुछ अपना मानकर बैठे हैं। किसी दूसरे को भी मिल जाये तो वाह! क्या बात है?

दूसरी महत्वपूर्ण बात भगवान् के द्वारा प्रदत्त जल-वायु, फल-फूल, औषधी-वनस्पति ये सभी उपयोगी और श्रेष्ठ बन पाये? या ये सभी भयंकर बीमारियों के कारण बन चुके हैं। परन्तु वेदी की स्थापना व उसके पास बैठने से सभी सुखी एवं उपयोगी बनते हैं। यही पृथ्वी की सुन्दरता और श्रेष्ठता है। श्रेष्ठता से किया गया उपयोग ही व्यक्ति को पृथ्वी से अन्तरिक्ष की ओर बढ़ाता है अर्थात् स्थूल से सूक्ष्म की ओर जाना ही पृथ्वी का सौन्दर्य है। इस वेदी को समझाने के लिए दूसरा विशेषण 'द्यौरिव भूम्ना' द्युलोक की तरह सुन्दर बताया है। अर्थात् यह वेदी 'द्यु' लोक की तरह सुन्दर है।

प्रश्नः 'द्यु' लोक कैसे सुन्दर है?

उत्तरः यह इसलिए सुन्दर है क्योंकि यह एक वाला नहीं है बल्कि अनेक वाला है।

प्रश्नः अनेक क्या है?

उत्तरः यहाँ बहुत सारे देवता निवास करते हैं। जैसे- सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र, ग्रह, उपग्रह आदि इन

देवताओं के कारण ही उनकी सुन्दरता है अर्थात् इसको देवलोक भी कह सकते हैं। शतपथ ब्राह्मण में वेदी को भी देवलोक कहा गया है। इस वेदी के चारों ओर बैठने वाले लोग भी देव कहलाते हैं। इसलिए इसको विद्वानों का पवित्र संगम (तीर्थ) कहते हैं। इन देवताओं से ही यह वेदी सुन्दर लगती है या यह कहें कि यहाँ बैठने से यज्ञ करने से सामान्य लोग भी देवता बन सकते हैं। देवता उसे कहते हैं जो लेता भी है और देता भी है। जो उसके पास सामग्री होती है वह उसे वेदी में आहुति के रूप में देता है, अपने पास नहीं रखता है और वह केवल अपने लिए नहीं देता बल्कि उसका लाभ सबको मिलता है। उसके लिए कार्यों से सभी लाभान्वित होते हैं। यह स्वयं प्रकाशित होता है और दूसरों को भी प्रकाश देता है। वह अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट नहीं रहता बल्कि सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझता है। सब से महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वह 'द्यु' लोक में रहता है। द्युलोक शरीर का सबसे ऊपरी हिस्सा मस्तिष्क है, उसमें रहता हैं जिसे लोग इस प्रकार कहते है 'दिल से नहीं दिमाग से काम ले।' जैसे चन्द्रमा का शीतला प्रकाश अशान्त व्यक्ति को भी शान्ति प्रदान करा देता है वैसे ही वेदी पर उपस्थित व्यक्त को शान्ति प्राप्त होती है और वह पृथ्वी पर कहीं भी रहे वह सबको शान्ति ही प्रदान कर अशान्ति को हर लेता है।

पेज 20 का शेष...

कहते हैं कि अगर दूसरों को इन नामों के बारे में बाताओगे तो गूँगे हो जाओंगे- फिर हमसे कुछ मत कहना। वाह जी! क्या मंत्र इतना बुरा है जो दूसरों के बताने से- बतानेवाला गूँगा बन जाता है? एक और बात गुरु जी कहते हैं कि 'तुमने हमको गुरु माना है- अब इसके बाद किसी को गुरु नहीं बनाना। न ही किसी गुरु के दर पर जाके माथा टेकना। ऐसा करोगे तो सर्वनाश हो जाएगा।' वाह जी! आपके ग्राहक दूसरी दुकान पर जाएँगे तो उनका सर्वनाश क्यों कर होगा? नुकसान तो आप ही का होगा कि एक ग्राहक कम जो जाएगा।

भाइयो! इस प्रकार के दम्भी-पाखण्डी गुरुओं से सावधान। सच्चे गुरु मिल जाएँ तो उन्हें अवश्य गुरु मानना चाहिए। उन सद्गूरूओं से मंत्र-दीक्षा प्राप्त करनी चाहिए। सद्गुरूओं की श्रद्धापूर्वक हर प्रकार से सेवा करनी चाहिए। सद्गुरूओं की आज्ञाओं का पालन अवश्य करना चाहिए। सद्गुरू ही इस भवसागर से पार उतारता है- यह बिल्कुल सही है, इसमें कोई विरोध नहीं है। गुरु सत्य मार्ग को बताता है, अत: यह मार्गदर्शक का कार्य करता है । जो अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है, जो असत्य से छूड़ाकर सत्य पथ पर चलाता है, जो मृत्यु के फंदे (चंगुल) से छुड़ाकर अमृतपान कराता है, ऐसे गुरुजनों को कोटि-कोटि प्रणाम! उनके चरणों में शीश झुकना ही शिष्यों का धर्म है- ऐसे गुरुओं की हर बात को अवश्य मानना चाहिये।

- शेष अगले अंक में

प्रश्नोत्तर के माध्यम से

अंधविश्वास-निर्मूलन

लेखक- मदन रहेजा

अंधविश्वास : 12 : घर में दीपक-अगरबत्ती जलाने से भगवान प्रसन्न होते हैं।

निर्मूलन : प्रसन्न और अप्रसन्न तो वे होते हैं जो अल्पज्ञ होते हैं। प्रसन्नता तब होती है जब मनचाही वस्तु प्राप्त होती है, और जब कोई वस्तु चली जाती है तो अप्रसन्नता होती है। ईश्वर तो परिपूर्ण है; उसके पास किसी वस्तु की कमी नहीं है। ईश्वर सर्वज्ञ है, पूर्णज्ञानी है, अत: इसके सुखी अथवा दु:खी होने का प्रश्न ही नहीं उठता। ईश्वर सदा एकरस रहता है, उसमें किसी बात की बढ़ोतरी या घटोतरी नहीं होती। जो परमपिता परमात्मा सूर्य इत्यादि ग्रहों को प्रकाशित करता है, उसे हम कुछ दीपक जलाकर क्या प्रसन्न कर सकते है? इतना प्रदूषण करके अगर कोई थोड़ी-सी अगरबतियाँ जला लेता है तो उससे उसके घर में ही सुगंध फैलती है। भला इससे ईश्वर क्यों प्रसन्न होंगे? मनुष्य स्वार्थी स्वभाव का प्राणी है। वह जो कुछ करता है। अपने स्वार्थ के लिए ही करता है। वह प्रभु-स्मरण करता है। तो भी उसमें मनुष्य का स्वार्थ ही छुपा होता है।

घर में रोशनी नहीं है तो दीया- दीपक जलाने से प्रकाश मिल सकता है। बिजली चली जाती है तो अक्सर लोग मोमबत्ती या दीया जला लेते हैं। जहाँ गाँव-खेड़े में अभी तक बिजली का प्रबंध नहीं है वहाँ आज भी शाम होते ही दीपक या लालटेल जलाते हैं। ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए दीया जलाना बिलकुल अज्ञानता की बात है। धुप-अगरबत्ती से थोड़ा धुआँ उठता है तथा खुशबू फैलती है। जिससे मच्छर इत्यादि जीव भाग जाते हैं। ईश्वर को सुगंध की क्या आवश्यकता है?

भाइयो और बहनो! दीया, अगरबत्ती, धूप इत्यादी जो हम पूजा में जलाते हैं, वे सब यज्ञकर्म न करने के बहाने हैं। यज्ञकर्म में दीया जलाया जाता है अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए, सामग्री में सुगंधित वस्तुओं का मिश्रण इसलिए होता है जिससे अग्नि में आहुति देने से वायुमंडल में सुगंध फैले और जड़ी-बुटियों से कीट-कीटाणुओं का सफाया हो। इससे घर में पवित्रता का वातावरण उत्पन्न हो जाता है जिससे विषैले प्रदूषण का प्रभाव नहीं पड़ता। घी के परमाणु अनेक रीगों को घर में आने से रोकते हैं। यज्ञकुण्ड में डाली हुई सभी वस्तुएँ अपना-अपना कार्य करती हैं।

आजकल यज्ञकर्म को सभी पवित्र लाभकारी तो मानते है, परन्तु कर्मकांड करने का किसी को समय नही। दीपक-धूप-अगरबत्ती यज्ञ का ही बिगड़ा हुआ या संक्षिप्त रूप है। शत-प्रतिशत नहीं तो 0.1 प्रतिशत तो लाभ मिलेगा-यही सोचा गया। प्राय: स्त्रियाँ घरों में संध्या होते ही दीपक जलाती हैं, धूप-अगरबत्तियाँ जलाती हैं। कुछ न करने से यह भी अच्छा ही है। धार्मिक भावनाएँ जीवित तो रहती हैं। यहाँ हवन के रूप में यज्ञ को सीमित अर्थ में लिया गया है।

दीपक देसी घी का ही जलाना लाभकारी है, क्योंकि घी (गाय के दूध से बना) कीटाणुनाशक होता है। घी जलकर अपने सूक्ष्मरूप से अनेक बीमारियों को रोकता है। रसोईघर शुद्ध पवित्र रहता है। जो गृहणियाँ शत-प्रतिशत लाभ उठाना चाहे तो यज्ञ को अपनाएँ। प्रतिदिन सवेरे-शाम यज्ञकर्म करना चाहिए क्योंकि यज्ञ से ही स्वर्ग का वातावरण उत्पन्न होता है, इसीलिए तो कहा है जो स्वर्ग की कामना करते हैं उन्हें यज्ञ अवश्य करना चाहिए। अत: यज्ञ को श्रेष्ठतम कर्म कहा गया है।

दीपक, धूप, अगरबत्ती से यज्ञ का कोई विरोध नहीं है। इनको जलाना लाभकारी है। परन्तु यह धार्मिक होना नहीं है। इस बात को अपने मस्तिष्क से निकाल दें कि दीया जलाने से ईश्वर प्रसन्न होंगे।

दीपक प्रकाश देता है। प्रकाश का आध्यात्मिक अर्थ है ज्ञान, अत: दीया हमें ज्ञान का दीपक जलाने की प्रेरणा देता है। प्रकाश से ही अंधकार दूर होता है, अत: ज्ञान से ही अज्ञानरूपी अँधेरा भाग जाता है। अगरबत्ती सुगंध देती है। हमें प्रेम और श्रद्धा की सुगंध से समाज को सुगंधित करना है- यही भावना होनी चाहिए।

अंधविश्वास : 13 : पूर्णिमा के दिन दान-दक्षिणा देना और यज्ञ-कर्म करना शुभ माना जाता है। अशुभ दिनों में शादी-ब्याह नहीं करते। कुछ दिन भी शुभ-अशुभ होते हैं।

निर्मूलन : शुभ दिनों में शुभ कर्म करने चाहिए इसका अर्थ यह हुआ कि अशुभ दिनों में कार्य करने की पूरी-पूरी छूट है। सच तो यह है कि कोई भी दिन शुभ-अशुभ नहीं होते, मनुष्य के कर्म ही शुभ-अशुभ होते हैं। ईश्वर से सभी दिन शुभ ही बनाए हैं। उसमें शुभ कार्य करो या अशुभ करो, आप पर निर्भर करता है। शुभ दिन में शुभ करना चाहिए और अशुभ दिनों में अशुभ कर्म करने चाहिएँ- कहीं नहीं लिखा।

जब हम शुभ कर्म करते हैं तो उनका फल भी शुभ मिलता है, और जब हम अशुभ

कर्म करते है तो उनका फल भी अशुभ अर्थात् दु:ख मिलता है। सब दिन बराबर होते हैं। ऋतुओं के आधार पर दिन गर्म ओर शीतल होते हैं बारिश होती है। बरसात के कारण आप स्वयं बाहर नहीं गए, काम नहीं किया तो दोष बारिश पर मढ़ते हैं। ऐसा नहीं है। बारिश के मौसम में बारिश होगी, अत: पहले से ही योजनाएँ बनानी चाहिएँ। फिर कार्य बराबर चलता है। दिनों को भला-बुरा कहना अज्ञानता है।

श्राद्ध के दिनों में विवाह नहीं करते-कराते। यह भी एक बड़ी भ्रान्ति है। क्या उन दिनों में मुस्लिम-यहूदी-ईसाइयों के घरों में शादियाँ नहीं होती? केवल हिन्दू ही ऐसा मानते हैं। उनके लिए श्राद्ध अशुभ दिन माने जाते हैं। क्या इन दिनों में बच्चे पैदा नहीं होते? क्या लोग नहीं मरते? क्या श्राद्धों में सूर्य-चन्द्रमा, ग्रह-उपग्रह अपने सब कार्य रोक देते हैं।? जब सब काम निर्धारित ढंग से होते हैं तो श्राद्ध के 15 दिन अशुभ माननेवालों के पास इन दिनों को अशुभ मानने का कोई ठोस आधार नहीं है।

ईश्वर की रचना पर शक करना, शंका करना, संशय करना, भ्रान्ति करना, भ्रम करना, वहम करना-यही पापकर्म है, यही अशुभ है।

जो लोग कुछ दिनों को अशुभ मानते हैं तो क्या अशुभ दिनों में अशुभ कर्म कर सकते हैं? क्या ऐसा करने से अशुभ कार्य शुभ बन जाते हैं? जिस घर में मृत्यु होती है, कहते हैं उस घर में सदस्यों को मंदिर में जाना नहीं चाहिए, घर में पूजा-पाठ नहीं करना चाहिए। कितनी बेतुकी बातें हैं। जिस घर में मौत होती है वहाँ तो पूजा-पाठ, संध्या-हवन प्रतिदिन करनी चाहिए। इन 10-12 दिनों मे जितने शुभ कर्म सकते हैं करने चाहिए। इससे घर में धैर्य-संतोष रहता है, आत्मिक बल बढ़ता है, दिवंगतात्मा के जाने के दु:ख का प्रभाव कम होता है, मन की शान्ति बनी रहती है, घर के वातावरण में शुद्धता-पवित्रता बनी रहती है। अब विद्वज्जन ही निर्णय करें कि क्या ऐसे शुभ कर्म करना अशुभ होते हैं?

वैदिक सिद्धान्तानुसार ईश्वर सर्वज्ञता से सृष्टि की रचना करता है और ईश्वर जो कुछ करता है सब जीवों के हित के लिए ही करता है। वह कभी अशुभ नहीं करता। किसी भी दिन को शुभ माना जाता है, और जिसके घर चोरी होती है उसके लिए वह दिन अशुभ होता है। फिर एक ही दिन को शुभ या अशुभ कैसे मान सकते हैं? किसी भी दिन या सप्ताह या महीने को अशुभ बताना- ईश्वर का निरादर करना है। ईश्वर में विश्वास और श्रद्धा न होने से लोग इस तरह सोचते हैं जो पाप है। ईश्वर के कार्य में शंका करना स्वयं को नास्तिकता की ओर ले जाना है। स्वयं ही फैसला करें कि आप कौन

हैं? आस्तिक या नास्तिक?

अंधविश्वास : 14 : ईश्वर जिसे चाहे उसी पर अपनी कृपा करता है, सब पर नहीं!

निर्मूलन : ईश्वर की कृपा सदा सब पर रहती है। कोई भी ऐसा प्राणी नहीं है जिस पर उस प्रभु की कृपा सदा न होती हो। अब यह जिज्ञासा अवश्य होती हैं कि किस पर परमात्मा विशेष कृपा करता है? सभी को हवा, पानी, रोशनी प्रदान करता है, किन्तु सज्जनों और पुरुषार्थी व्यक्तियों पर उसकी विशेष कृपा बनी रहती है। उनके हृदय मे सदैव सन्तोष एवं आनन्द की अनुभूति प्रदान कर अपनी विशेष कृपा करता है।

ईश्वर की कृपा के लिए सुपात्र होना परमावश्यक है। जैसे कोई भिखारी भिक्षा माँगने किसी के घर जाता है। घर में खीर बनी है। गृहणी देखती है कि भिखारी का पात्र गंदा है, अत: खीर देने पर खराब हो जाएगी और खाने के काम नहीं आएगी, अत: वह पात्र में खीर डालने से पहले उस भिक्षुक को कहती है कि पहले अपना पात्र धोकर स्वच्छ करके आओ, तभी भिक्षा लेना। जिसका पात्र शुद्ध-साफ होता है वही भिक्षा का भागी बन सकता है। यही किस्सा सबके साथ जुड़ा है। जब तक मनुष्य अपने हृदयपात्र को साफ नहीं कर लेता-शुद्ध पवित्र नहीं बना लेता अर्थात् काम-क्रोध-लोभ -मोह-ईर्ष्या-द्वेष इत्यादि गंदगियों को निकाल बाहर नहीं फेंक देता, तब तक ईश्वर की अमृतमयी कृपा को कैसे प्राप्त कर सकता है? ईश्वर सर्वज्ञ है- सर्वान्तर्यामी है- सर्वव्यापक है। उसे मालूम है कौन कुपात्र है और कौन सुपात्र। बिना माँगे ही सुपात्र को सब-कुछ मिल पाता है और माँगने पर भी कुपात्र को कुछ भी नहीं मिलता।

जब तक साँस में साँस है, समझो ईश्वर की कृपा हो रही है। ईश्वर ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, तारे, नक्षत्र सब जीवों के लिए ही बनाए हैं। जिसमें जितनी योग्यता है, वह इन भूतों से, जड़ देवताओं से लाभ उठाता है। यही तो परमपिता परमात्मा की कृपा है। इन्सान जीवित है- प्राण चल रहे हैं, यह भी तो उस प्रभु की ही कृपा का प्रभाव है।

अंधविश्वास : 15 : जो भाग्य (किस्मत) में लिखा है वही मिलता है या होता है।

निर्मूलन : यह मान्यता बिलकुल सत्य है। जो नसीब में लिखा है वह तो मिलना ही मिलना है। इसे कोई रोक नहीं सकता। किस्मत में इस प्रकार नहीं लिखा होता कि आपको गाड़ी, टीवी या फ्रिज मिलेगा। हाँ, इतना अवश्य है कि अगर आपके पूर्व-कर्म अच्छे हैं तो फल शुभ ही मिलेगा। किस रूप में मिलेगा यह कहना कठिन है।

पूर्व-जन्म के संचित कर्मो का फल जब प्राप्त होता है, तो उसे ही किस्मत, नसीब

अथवा भाग्य कहते है, किन्तु केवल किस्मत के भरोसे बैठना नहीं चाहिए, क्यों आपको नहीं मालूम कि किस्मत में क्या लिखा है? हमारा कर्त्तव्य है हमेशा प्रयत्नशील- कर्मशील रहना। वर्तमान में किये कर्म का फल भी मिलता है, अत: कभी इस भरोसे नहीं बैठना चाहिए कि पिछले कर्म के फल पकेंगे सो मिलेंगे। ये निकम्मों की बातें हैं।

मनुष्य को क्रतु कहा है, अर्थात् कर्म करनेवाला। मनुष्य जब तक जीवे, कर्म करते हुए जीवे।

ठग ज्योतिषी और अज्ञानी साधु-संत प्राय: ऐसा कहते हैं कि आपके भाग्य में फलाँ-फलाँ लिखा है- वह झूठ जानो, क्योंकि किस्मत काक लिखा कोई नहीं पढ़ सकता। जो होना है वह अवश्य होना है। किसी के कहने या न कहने से कुछ नहीं होता। भाग्य माथे पर लिखा नहीं होता; भाग्य तो कर्मों में छुपा होता है। किसी के कर्मों को परमपिता परमात्मा के सिवा कोई नहीं जानता, यहाँ तक कि स्वयं कर्ता भी नहीं जानता।

इसीलिए तो कहते हैं कि जो भी काम करो, सोच-विचार कर, ज्ञानपूर्वक करो। सौ काम छोड़कर भी भोजन करना चाहिए- हजार काम छोड़कर भी स्नानादि करना चाहिए- लाख काम छोड़कर भी दान करना चाहिए और करोड़ काम छोड़कर भी पहले प्रभु की उपासना करनी चाहिए।

अंधविश्वास : 16 : पशुबलि देने से सब कार्य पूर्ण होते हैं- रुके हुए कार्य पूरे होते हैं- मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं।

निर्मूलन : मनुष्य के मस्तिष्क का क्या कहना। जब निष्काम काम करता है तो इन्सान से भगवान बन जाता है, और जब कुकर्म करता है तो वह शैतान बन जाता है। वेद में कहीं भी नहीं लिखा कि पशुवध करके उसकी बलि चढ़ाने से मनोकामनाएँ पूर्ण करती हैं। मनुष्य जब मनुष्य नहीं रहता, पशु- जैसे कर्म करने लगता है तो उसकी बुद्धि भी पशु-सी बन जाती है। अपनी रसना की पूर्ति के लिए, स्वार्थ-पूर्ति के लिए जो नीच कर्म करता और करवाता है, उसे ज्ञात हो कि किसी भी जीव की बिना कारण हत्या करना घोर पाप है। वेद में तो सब प्राणियों से प्रेम करना सिखाया है। हत्या तो दूर की बात है, वैर-विरोध करना भी अनुचित बताया है। जिस धर्मग्रन्थ में अहिंसा को सबसे पहले प्राथमिका दी जाती है, वहाँ भला हत्या की बात कैसे हो सकती है? अपितु वैदिक धर्म में तो मन, वाणी एवं कर्म से अहिंसा का पालन करने की प्रेरणा दी गई है। बलि ही देनी है तो अपने-आप की बलि देनी चाहिए, अपने घमंड की बलि देनी चाहिए। ईश्वर के प्रेम में सर्वस्व की बलि देनी

चाहिए। बलि का अर्थ यह नहीं हैं कि किसी के शरीर को काटकर, खून बहाकर उसे अग्नि के हवाले करें- यह तो नीच कर्म है। इससे बड़ा पाप हो ही नहीं सकता! यह अघोरी जाति का कार्य हो सकता है- मनुष्य का नहीं!

पशु का वध करके बलि देना मूर्खता का काम है- पापी लोगों का काम है। जो ऐसा करते हैं या मानते हैं उनसे बड़ा बोझ इस पृथिवी पर नहीं हो सकता। मानव-धर्म में तो किसी के भी दिन को दुखाना पाप है, तो ऐसे मूक पशु-पक्षियों को काट-मारकर बलि देना, फिर स्वयं उस मांस से अपना उदर भरना- यह तो पशुता की भी पराकाष्ठा है। शाकाहारी पशु भी ऐसा नहीं करते, और यदि मनुष्य ऐसा करें तो वह तो पशु कहलाने के काबिल भी नहीं बचता। पढ़े-लिखें समाज में ऐसी बातें करना-सोचना तो अपने-आपको हैवान प्रमाणित करना है। जो लोग ऐसा मानते हैं कि सर्वश्रेष्ठ कार्य होना चाहिए, उन्हें अपने घर से ही शुरूआत करनी चाहिए। ऐसे लोगों को उचित है कि वे अपने ही परिवार के किसी सदस्य की बलि चढ़ाएँ।

कार्य पूर्ण होते हैं परिश्रम से। ज्ञानपूर्वक कर्म करने से रुके हुए कार्य भी पूरे होते हैं। कर्म किये जाओं, बाकी सब ईश्वर पर छोड़ दो। ईश्वर हम सब की आवश्यकताओं को भलीभाँति जानता है और पूरा भी करता है। मनोकामनाएँ तो मरने तक पूर्ण नहीं होतीं। एक होती है जो मन पर संयत करे, जो परिश्रम से प्राप्त हो उसे प्रभु का प्रसाद समझकर उपयोग करे। इच्छओं का कभी अन्त करना सीख लें। अपनी इन्द्रियों को वश में रखें, इसी से हमारा मन शान्त और प्रसन्न रहता है। मन तो जड़ है, वह भला क्या कर सकता है? बुद्धि द्वारा उस पर अंकुश लगाना सीखें- आत्मा को पवित्र बनाएँ। यही तो मनुष्य- जीवन का लक्ष्य है, इसी पर सदा ध्यान दें और इसमें सफलता प्राप्त करने का यथाशक्ति योग द्वारा प्रयास-प्रयास करते रहें।

सबसे प्रेम करना सीखें, यहीं से ईश्वर की भक्ति प्रारम्भ होती है। प्रेम ही सबसे पहली सीढ़ी है जिसके द्वारा श्रेयमार्ग पार करके व्यक्ति अपने प्रियतम परमेश्वर से मिल सकते हैं।

अंधविश्वास : 17 : गुरु धारण करना अनिवार्य है। बिना गुरु के मुक्ति प्राप्त नहीं होती।

निर्मूलन : हाँ गुरु धारण करना सचमुच अनिवार्य है, किन्तु पहले यह समझना होगा कि गुरु-धारण से कोई है कि नहीं?

गुरु की सबसे सरल परिभाषा यही है कि जो अपने शिष्यों को अंधकाररूपी असत्य से छुड़ाकर ज्ञान की ओर ले जावें, स्वयं सत्याचरण करे और औरों को भी सत्याचरण

करना सिखावें। जो सही मार्गदर्शन करे। गुरु Guide होता है, अतः स्वयं सिद्ध पुरुष ही दूसरों को सिद्धि का मार्ग दिखा सकता है।

गुरु कहते हैं शिक्षक को अर्थात् जो विद्या दान दे। मोटी भाषा में- जिससे भी हमें कोई न कोई ज्ञान प्राप्त होता है वह गुरु कहलाता है। मार्ग भटक जाने पर जो हमें मार्ग दर्शाता है वह भी एक प्रकार का हमारा गुरु है। जो विद्यालय/कॉलेज में हमें लिखना-पढ़ना सिखाता है वह भी गुरु है। इस संसार में किस प्रकार जीना है- जो ऐसी बातें बताता है वह भी गुरु कहाता है।

जो गुरु अपने शिष्यों को आत्मा-परमात्मा की बातें बताता है अर्थात् जो आत्मिक उन्नति हेतु सद्ज्ञान प्रदान करता है- वेदों की बातें बताता है- वह, आध्यात्मिक गुरु कहता है, जिसे अधिकांश लोग सद्गुरु कहते है। जो अपने शिष्यों को बिगाड़ता नहीं, अपितु सँवारता है- वह सच्चा गुरु है। जो सबको समदृष्टि से देखता है चाहे वे उसके शिष्य की ही भलाई नहीं चाहता, अपितु अपनी विद्या सबको समान रूप से प्रदान करता है- वह सच्चा गुरु कहलाने योग्य है। अब भ्रान्ति है कि गुरु का होना अनिवार्य है कि नहीं, और है तो क्यों?

इस संसार में मनुष्य का सबसे पहला गुरु उसकी 'माता' होती है जिससे वह ममता और प्रेम प्राप्त करना है। दूसरा गुरु उसका 'पिता' होता है जो उसका पालन-पोषण और संरक्षण करता है। दुनियावादी की बातें पिता ही सिखाता है। अन्त में तीसरे दर्जे का गुरु 'आचार्य' होता है जो अपने शिष्य को परा और अपरा विद्या का दान देता है, उसके आचरण को सँवारता है, संस्कारों को सुसंस्कृत करता है, अपनी योग्यता से असत्य से छुड़ाकर सत्यमार्ग परचलने की प्रेरणा देता है, अपने शिष्य को समय-समय पर परखता है, परीक्षण करता है- परीक्षा लेता रहता है। गुरु आध्यात्मिक विकास करता है- सत्यासत्य का ज्ञान करा देता है, अपने शिष्यों की सभी शंकाओं का वैदिक सिद्धान्तों से समाधान करता है। जैसे माता के गर्भ में बच्चा पैदा होता है और माता उसके सांसारिक पिता के दर्शन कराती है, उसी प्रकार 'आचार्य' अपने शिष्यों को दोबारा जन्म देता है क्योंकि वह उसे परमपिता परमात्मा के दर्शन कराता है। यही कारण है कि इस सच्चे गुरु का दर्जा महान् माना जाता है।

इन तीनों गुरुओं से भी बड़ा, परम गुरु एक और भी है जिसे 'ईश्वर' कहते हैं। सृष्टि के आदि में मनुष्य की उन्नति के लिए उसकी भलाई के लिए, उसकी मुक्ति के लिए उसकी ग्रहण करने की क्षमता के अनुसार समस्त ज्ञान

'वेद' द्वारा प्रदान करता है। वेद ही सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है जिसमें मनुष्यमात्र के लिए सत्य-प्रेम का पाठ पढ़ाया गया है- जिसमें परा-अपरा दोनों विद्याओं का सम्पूर्ण ज्ञान है। संसार में ऐसा कोई प्रश्न/शंका नहीं जिसका उत्तर/समाधान वेद में न हो, क्योंकि वेद ईश्वरीय ज्ञान का अथाह भण्डार है। जितना वेद का स्वाध्याय और आचरण करेंगे उतना ही अधिक ज्ञान मिलता है। गूढ़ से गूढ़ विषय भी वेदाध्ययन द्वारा आसानी से समझ में आ जाते हैं।

जो वेदाध्ययन करके वैसा आचरण करता है और औरों को कराता है। वह सद्गुरु का दर्जा प्राप्त करता है गुरु-शिष्य परम्परा तो सृष्टि के आदि से ही चली आ रही है। गुरु का पूरा ज्ञान बाँटने के लिए होता है, तभी तो वह गुरु पूजनीय होता है। गुरु रुपये-पैसों के लिए हाथ नहीं फैलाता, न ही अपने भक्तों से आग्रह करता है।

अब आइये-वर्तमान काल के गुरुओं पर कुछ ध्यान देते हैं कि ये सचमुच में गुरु कहलाने योग्य हैं या केवल चेलों में ही प्रसिद्ध प्राप्त किये हुए हैं। आज के युग में गुरुओं की अनेक दुकानें खुल गई हैं। जी हाँ, दुकानें खुल गई हैं और रोज़ नई-नई दुकानें खुलती जा रही हैं, क्योंकि चेलों की कमी नहीं है। हाँ- वैदिक गुरु हैं- उनके यहाँ 15-20 से अधिक योग्य शिष्य भी नहीं मिलते जो अपना पूरा जीवन मनुष्य-निर्माण में लगाए रहें।

आजकल के बाजारी गुरु नामदान के नाम पर अपने चलों से क्या नहीं करवाते। ईश्वर को अपने पीछे रखे हुए हैं और स्वयं आगे बैठे है ईश्वरीय पूजा के स्थान पर अपनी पूजा करते है कहते हैं गुरु स्मरण से ही प्रभु की प्राप्ति होगी क्योंकि चेलों की कमी नहीं है। हाँ, शिष्यों की कमी अवश्य है। शिष्यों की इसलिए कमी है क्योंकि सच्चे गुरु हैं- वैदिक गुरु हैं- उनके यहाँ 15-20 से अधिक योग्य शिष्य भी नहीं मिलते जो अपना पूरा जीवन मनुष्य-निर्माण में लगाए रहें।

आजकल के बाज़ारी गुरु नामदान के नाम पर अपने चेलों से क्या नहीं करवाते! ईश्वर को अपने पीछे रखे हुए हैं और स्वयं आगे बैठे हैं। ईश्वरीय पूजा के स्थान पर अपनी पूजा कराते हैं। कहते हैं गुरुस्मरण से ही प्रभु की प्राप्ति होगी क्योंकि गुरु और परमात्मा में कोई अन्तर नहीं है, दोनों एक ही हैं। ये अपने-आपको ही ईश्वर मान बैठे हैं। ऐसे गुरु वाहनों में घूमाते हैं और चेले भी अपने गुरु की शान देखकर खूब खुश होते हैं। सबको अपना-अपना गुरु अच्छा लगता है। गुरु के जितने अधिक चेले, उतना ही गुरु महान्।

परन्तु ऐसा विचारना मिथ्या है। प्रकट में

जो दिखता है वह गलत भी हो सकता हैं जैसे जादूगर अपनी कलाकारी दिखाते हैं- हाथ की सफाई का प्रदर्शन करते हैं- उसे सही मान लेना मिथ्याज्ञान है; उसकी गहराई में जाकर देखेंगे तो लगेगा हम गलत थे, वैसे ही भीड़ देखकर अंदाजा न लगा लें कि यहाँ सत्संग हो रहा है तो गुरु कमाल का होगा- सिद्ध पुरुष होगा-या इकट्ठे करना कोई कमाल नहीं है। मदारी भी रास्ते पर भीड़ इकट्ठी करता है। नेता लोग तो लाखों की तादाद में श्रोताओं को जमा करते हैं। यह दुकानदारी है। अपने ग्राहकों को बड़े-बड़े पंडालों में इकट्ठा करते हैं- कुछ सुनाते है, कुछ हँसाते हैं और अपने पीछे-पीछे चल पड़ते हैं। जहाँ भीड़ देखी वहाँ चल दिये! सुनने में अच्छा लगता है, टाइम पास (समय व्यतीत) होता है, किन्तु क्रियात्मक कार्य कुछ नहीं होता। गुरु कहते हैं जब तक हमारा नामदान नहीं लोगे-गाड़ी आगे नहीं जाएगी। देखा-देखी में चाहे-अनचाहे चेलों की कतारें नामदान ग्रहण करने के लिए लग जाती हैं। कौन सुपात्र है कौन कुपात्र है- कौन देखता है? भरी जनता को दो-चार ईश्वर के गौण नाम जपने को कहते हैं- 'नाम जपते रहो, यही ध्यान है। ऐसा जपने से (गुरु के नामदान को जपने से) आपका बेड़ा पार हो जाएगा। बाकी सब गुरु पर छोड़ दो। कुछ भी करो गुरु सँभाल लेगा।' बदले में गुरु-दक्षिणा तो देन ही पड़ेगी! गुरु-दक्षिणा क्या होती है- पाठकगण-विद्वज्जन समझ ही गए होंगे! तीन-चार-पाँच नाम के बदले कितना धन इकट्ठा करते हैं इसका अंदाजा भी नहीं लगाया जा सकता। बस गुरु का अपना काम तो हो गया। चेले भी नासमझी में गुरु द्वारा बताया काम करते रहते हैं और अपनी सब प्रकार की समस्याएँ गुरु पर छोड़ देते हैं। सच्चे ईश्वर का स्वरूप तो भूल ही जाते हैं। उनके ध्यान में गुरु ही गुरु समा जाता है। ईश्वर के स्थान पर गुरु ही गुरु समा जाता है। ईश्वर के स्थान पर गुरु की तस्वीर को मन में बसा लेते हैं। क्या करें! जो उनके गुरु ने समझाया है वही तो करते हैं! न गुरु अपने चेलों की खबर लेता है, न ही चेले अपने गुरु के बारे में कुछ सुनना चाहते हैं। चेले बेचारे आशा लेकर आते हैं और उसी आशा में मर-खप जाते हैं। जैसा गुरु वैसा चेला! 'हाँ जी, हाँ जी' करते-करते पूरा जीवन ऐसे ही गँवा देते हैं। ईश्वर क्या चीज है, आखिर तक पता नहीं चलता।

यह दुकानदारी नहीं तो और क्या है? दुकानदार सस्ते में माल खरीदता है और महँगे में बेचता हैं ये दुकानदार गुरु भी ऐसा ही करते हैं- मुनाफा स्वयं डकारते हैं! यहाँ-वहाँ से सुनकर या कुछ पुस्तकें पढ़कर चेलों को अच्छे-खासे भाव में बेचते हैं। न गुरु सन्मार्ग का आचरण

करता है, न ही चेले करते हैं। बात वहीं की वहीं रह जाती है। जैसे आए थे वैसे ही चेले गए। मनुष्य-योनि व्यर्थ में गँवा देते हैं। हर युग में अनेक गुरु आते-जाते हैं, फिर भी संसार में लोग क्यों नहीं बदलते? सोचनेवाली बात है। उल्टा पापकर्म बढ़ते जाते हैं। वर्तमान में जितने गुरु (दम्भी-पाखण्डी) इस प्रकार की दुकानदारी चला रहे हैं, उतने ही उनके चेले बिना विचारे सब काम करते हैं। परिणाम सबके कारनामे छपते रहते हैं। (हम यहाँ लिखना उचित नहीं समझते। समझनेवाले समझ ही गए होंगे।

विचारणीय यह है कि गुरु धारण करना अनिवार्य है कि नहीं?

जिस-जिस विषय में हमें ज्ञान नहीं है उसकी जानकारी तो पूछने से ही हो सकती है, अत: मार्गदर्शन का होना जरूरी है- अनिवार्य है। आध्यात्मिक विषय गूढ़ होते हैं, अत: अच्छी तरह पूरी जानकारी के लिए आध्यात्मिक गुरु अगर मिल जाए तो बहुत अच्छा है। सच्चा गुरु मिल जावे तो सोने में सुहागा है। गुरु किसे नहीं चाहिए? जहाँ कहीं से सद्ज्ञान प्राप्त हो, अवश्य ग्रहण करते रहना चाहिए। जिस गुरु से आपकी शंकाओं का समाधान हो, उनसे संपर्क बनाए रखना चाहिए। गुरु सच बोलता है या नहीं- इसकी पहचान को स्वाध्याय करने से ही होती है। जो-जो बातें वेदानुसार खरी उतरती हैं- जो-जो बाते अपने मन, बुद्धि और आत्मा को अच्छी आचरण करना चाहिए। गुरु रात को दिन कहे और दिन को रात बताए तो ऐसी अविश्वसनीय बातों को नहीं मानना चाहिए। जिन बातों का प्रमाण न मिले या प्रकृति-नियम के विरूद्ध हों, उन्हें मानने से इनकार करने में कोई पाप नहीं है। इसमें गुरु का अपमान नहीं समझना चाहिए। हो सकता है कि जो गुरु कहता है वह गलत हो, क्योंकि गुरु भी तो एक मनुष्य ही है और मनुष्य गलतियाँ कर सकता है। इस स्थिति में आर्ष ग्रन्थों का सहारा लेना परमावश्यक है। वेद ही अंतिम प्रमाण है, अत: वेदाध्ययन उससे भी जरूरी हैं वेद का आदेश है सत्याचरण करो और किसी भी जीव को मत सताओ। यदि गुरु इसके विरुद्ध पाठ पढ़ाता है तो उस गुरु के त्यागने में एक क्षणभर की भी देर नहीं हो सकता। जो गुरु ईश्वरीय ज्ञान को न जानता है, न मानता है, उसे गुरु कहना तो दूर की बात है, वह तो एक सामान्य मनुष्य की श्रेणी में भी नहीं आता। निर्मल आत्मा की आवाज सुनने का प्रयास करें। गुरु कोई भगवान नहीं है- ईश्वर नहीं है कि वह जो कहे वही सत्य हैं गुरु तो कोई भी बन सकता है- स्वाध्याय करके-आर्य आजकल तो जिसे भी थोड़ा-बहुत बोलने की कला आ जाती है वह

अपने-आपको गुरु मानने और मनवाने लगता है। जो शुद्ध ज्ञान की प्राप्ति कर, स्वयं भी वैसा ही आचरण करता है तथा परोपकार की भावना से सबको सुनाता है- समझाता है- वही सच्चा गुरु कहलाता है। नाम-दान के बदले दाम लेनेवाले, गुरु नहीं हो सकते, भले ही कितने भी विद्वान् ही क्यों न हों। ये तो व्यापारी हैं, दुकानदारी करते हैं, क्योंकि इनकी बातें कुछ और होती हैं और आचरण कुछ और । ऐसे दुकानदारों की बातें नहीं सुननी चाहिए और न ही उनपर आचरण करना चाहिए, क्योंकि हो सकता है परिणाम कुछ और निकले।

ईश्वर सृष्टा, पालक और सहारक है, तद्नुसार उसके गुण-कर्म-स्वभाव भी भिन्न-भिन्न हैं, अतः उसके नाम भी अनेक है; परन्तु परमपिता परमात्मा का निज और सर्वप्रिय प्रसिद्ध नाम 'ओ३म्' है जिसका उच्चारण ओ३म्' नाम का जाप करना, ओ३म् नाम का अर्थपूर्वक स्मरण करना अत्युत्तम है।

ईश्वर के किसी भी अन्य गौणिक नाम में अगर श्रद्धा-प्रेम है तो वह भी आपके लिए उतना ही लाभकारी है जितना कि प्रभु का प्यारा नाम 'ओम्'। ध्यान में रखने योग्य बात यह है कि नाम का अर्थ क्या है? शब्द के अर्थ का विचार/ध्यान करना उतना ही आवश्यक है जितना नाम को स्मरण करना। नाम में जो-जो गुण-कर्म-स्वभाव हैं, उनको स्मरण करके अपने जीवन में उन अर्थों का आचरण करना ही सही मायनों में नामस्करण है। सही नामस्करण की विधि है। नामस्मरण गुरु से संपर्क करके करें या स्वयं विवेक से भी करें, कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि नाम की शक्ति उसमें छुपे अर्थ में होती है। अर्थ ही मालूम नहीं तो नाम जपने का क्या अर्थ?

मंत्र तो वेदों के होते हैं। वेदों की ऋचाओं को ही मंत्र कहते हैं, जो परमेश्वर के दिये होते हैं मनुष्य तो मंत्र का निर्माण कर ही नहीं सकता। गुरुमंत्र (गायत्री मंत्र) वैदिक ही है। मंत्र चारदीवारी में छुपाकर अपने शिष्यों को देने की चीज नहीं है। मंत्र सब के समक्ष भरी सभा में सुनाना चाहिए। अर्थ-सहित मंत्रपाठ से ही भला हो सकता है। जब मंत्र का रचयिता ईश्वर है तो अपनी ओर से मंत्र देनेवाला गुरु कौन होता है? चोरी छुपे देने का अभिप्राय क्या हो सकता है? चोरी-छुपे जो भी काम होता है- (रहस्य) होता है उसका कारण तो होना चाहिए? कुछ ही लोगों को नामदान दें, अन्यों को उससे वंचित रखें, यह या तो अन्याय है या फिर उसके पीछे स्वार्थ छुपा है। ये बातें गुरुओं के चेलनों को अपने गुरु से पूछनी चाहिएँ। ये गुरु जो मंत्र या नामदान देते हैं, औरों को बताने से भी इनकार करते हैं- **शेष पेज 9 पर...**

हनुमान, अंगद और ब्रह्मचारी दयानन्द

लेखक- कुंदन लाल आर्य चूनियाँ वाला

6 वीर वजरंगी हनुमान्

पवन सुत अंजनादेवी के दुलारे को वीर वजरंगी हनुमान् कहते हैं । इनके सम्बन्ध में यह बात कही जाती है, कि वे बन्दर थे परन्तु यह बात युक्ति संगत नहीं । प्रथम तो इनके माता-पिता का नाम ही सिद्ध करता है कि वे मनुष्य थे, क्योंकि किसी बन्दर के माता - पिता का नाम ही आज तक नहीं सुना जाता । दूसरे वानर शब्द से यह गलत फ़हमी हुई है। वानर शब्द से नर का अर्थ मनुष्य ही है, यानी ऐसे मनुष्य जो नगरों में न रह कर वनों में अथवा जमीन के नीचे गुफाओं में या जमीन के नीचे शहर बना क़र रहते हैं। जैसे वे किष्किन्धा नगरी में जो जमीन के नीचे शहर बना कर रहते हैं। जैसे आज कल गोरीला फौज होती है जो पहाड़ों और जंगलों की लड़ाई में निपुण होती है। वैसे ही वह वानर फौज होगी, जो गोरीला जंग में निपुण होगी, आज कल बंगाल में एक बैनरजी नाम की जाति विशेष भी रहती है। और फिर भगवान् राम हनुमान् के मुतल्लिक कहते हैं कि बिना ऋग्वेद, यजुर्वेद सामवेद का विद्वान् हुऐ ऐसा नहीं बोल सकता, निश्चय ही उसने व्याकरण भी बहुत पढ़ा है। वाल्मोकि रामायण किष्किन्धा काण्ड) और बाकी रहा पूछ का सवाल तो आज कल भी पुलिस या फौज वाले जब आंसु लाने वाले गोले छोड़ते हैं या गौस वगैरा दुश्मन पर छोड़ने वाले फौजी खास किस्म की पोशाक पहनते हैं, उसको मास्क कहते हैं और उनकी नाक के आगे बहुत लम्बा सुंड की तरह लगा होता है, इस तरह मुमकिन हो सकता है कि वानर सेना ने इस किस्म का कोई हथियार बनाया हो जो पूंछ के समान आकृति वाला हो या बिजली वगैरा के प्रयोग के लिए इसमें बैटरी वगैरा लगाई जाती हो, और इस बैटरी के जोर से आकाश में उछल कूद करना आसान हो जाता हो जैसा कि वाल्मीकी रामायण में लिखा है कि हनुमान आकाश में उड़ा और हजारों को ऐसे मार दिया जैसे इन्द्र को। फिर लिखा है कि बड़ा वेगवान हनुमान् राक्षसों पर टूट पड़ा, जैसे पर्वत पर बिजली। वैसे ही रामायण के अन्दर यह बात भी स्पष्ट लिखी है कि हनुमान और सुग्रीव जब भगवान राम से मिलने आए तो वे बन्दर रूप छोड़ कर मनुष्य के रूप में मिले, इससे यह बात भी स्पष्ट होती है कि उनका बन्दर रूप बनावटी था और रावण आदि राक्षसों से मुकाबला करने के लिए उन्होनें एसी वर्दी वनाई थी जो वे जब

चाहते थे उतार सकते थे, आज कल राकटों में जाने वालों की पोशाक आप देखें तो बिल्कुल बन्दर जैसी ही लगती है। क्योंकि हनुमान् जी का जिस्म सर्दी गर्मी सहन करने के कारण वज्र के समान था, इसलिए वे वीर वजरंगी के नाम से प्रसिद्ध थे।

और

महर्षि दयानन्द ने भी ब्रह्मचर्य, तप योग साधन और चौदह वर्ष तक निरन्तर पर्वतों जंगलों में घूमने से और कुछ साल तक सिर्फ एक लंगोट में रहने से अपने अंग-अंग को वज्र के समान बना लिया था, उनके जीवन की निम्नलिखित घटनाएं उनको वीर बजरंगी सिद्ध करती हैं।

1 - जब महर्षि, गुरू विरजानन्द जी महाराज के पास पढ़ते थे तो एक दिन गुरू जी ने किसी बात पर नाराज होकर स्वामी जी के जिस्म पर लाठी मारी जिससे दण्डी स्वामी विरजानन्द जी का हाथ दर्द करने लग गया। तब महर्षि गुरूदेव का हाथ दबाते हुए कहने लगे। गुरुदेव आप मुझे न मारा करें, मेरा शरीर तो वज्र के समान है, आपके कोमल हाथों को दु:ख होगा। जब आपने मुझे सजा देनी हो तो किसी और शिष्य को कह दिया करे। और महर्षि गुरु जी से खाई हुई इस चोट के निशान को देख कर गुरुदेव के उपकारों को याद कर लिया करते थे।

2. संवत् 1924 से जहांगीराबाद जिला बुलन्दशहर का एक रहीस जो वरजिशी नौजवान भी था, वह गंगा-स्नान को आया और वह स्वामी जी के उपदेश सुनकर उनका श्रद्धालु बन गया। एक दिन स्वामी जी के बल की परीक्षा करने की नीयत से महाराज के पांव दबाने लगा परन्तु उसको ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वे पाँव वज्र के हों। पांव दबाते वह खुद पसीना-पसीना हो गया परन्तु वह अपनी उंगलियां स्वामी जी के पैर में न घुसेड़ सका।

3. संवत् 1924 पोष महीने की एक रात्रि के समय महाराज गंगा के तट पर ठंडी रेत पर सिर्फ एक कौपीन धारण किये समाधि लगाये हुए थे, इतने में दो अंग्रेज अफसर शिकार खेलते हुए वहां आ निकले। महर्षि को इस अवस्था में देख कर उन्होंने यकीन कर दिया कि यह मरा हुआ आदती है, क्योंकि इनके विचार में ऐसे कड़ाके की सर्दी में कोई आदमी नंगे बदन जीवित नहीं रह सकता था, उन्होंने स्वामी जी की देह को हाथ लगा कर हिलाया तो महाराज की समाधि खुल गई, महाराज को जिन्दा देखकर उनकी हैरानी की कोई हद न रही। तब अंग्रेज बन अफसर ने जो जिला का कलैक्टर था बड़ी हैरानी से स्वामी जी से पूछा कि आप ऐसे कड़ाके की सर्दी में नंगे बदन कैसे जिन्दा रह सके। अभी स्वामी जी उत्तर देने ही वाले थे कि

उनके साथ वाले अंग्रेज ने कहा- कि अण्डे मांस तो आप खाते हैं। हम तो दाल रोटी ही खाने वाले हैं, परन्तु यदि आप को अंडे मांस खाने में यह शक्ति प्रतीत होती है तो जरा अपने कपड़े उतार कर मेरे साथ बैठ जायें तब वे शर्मिन्दा होकर वहां से चल दिये।

4. इन्हीं दिनों का जिकर है कि जहांगीराबाद में जब श्रोतागण कड़ाके की सर्दी से बचने के लिए लिहाफ और गर्म कम्बल लेकर भी कांपा करते थे तो महाराज नंगे वदन उपदेश दिया करते थे। एक दिन जब भक्तों ने पूछा-महाराज आपको सर्दी नहीं लगती तो अपने दोनों हाथों के अंगूठे दबा कर सारे जिस्म को पसीना-पसीना कर लिया। भक्त लोग महाराज की इस अद्‌भुत शक्ति को देख कर हैरान रह गये। लगातार छः साल तक सिर्फ एक लंगोट में विचरने के बाद महर्षि दयानन्द जी का अंग-अंग वज्र के समान हो चुका था।

बाली सुत अंगद

रामायण में बाली सुत अगद का पार्ट यह है कि वह रामचन्द्र जी का दूत बनकर रावण की सभा में गया। ताकि युद्ध की नौबत न आने पाये। और रावण सीता को रामचन्द्र जी के हवाले कर देवे परन्तु रावण न माना और कुछ लोगों के परामर्श से उसको मरवा डालने की योजना बनाने लगा। जिस पर अंगद ने अपना एक पांव जमीन पर जमा कर रावण को चैलेंज किया कि आपका अगर कोई योद्धा मेरा पांव जमीन से हिला सके तो मेरे सामने आवे परन्तु रावण के जवानों ने बहुत जोर लगाया लेकिन अंगद का जमा हुआ पांव न हिला सके और शर्मिंदा हो कर बैठ गए। और अंगद सही सलामत वापस आ गया। अंगद को यह विद्या याद थी कि वह अपनी सारी शक्ति को किसी एक अंग में इकट्ठी कर लेता था।

और

1. महर्षि दयानन्द जी भी इस विद्या के पूर्ण विद्वान् थे। महर्षि जी सन् 1878 में जब मेरठ पधारे तो एक दिन, रात के नौ बजे श्री वेनीप्रसाद शारदा और उनके कई मित्रों ने महाराज की सेवा में उपस्थित हो कर कहा कि हम आप के चरण दबाना चाहते हैं, महाराज जान गये कि यह मेरे बल की परीक्षा करना चाहते हैं। महाराज ने कहा पैर तो पीछे दबाना पहले मेरा पाँव उठाओ तो सही यह कह कर उन्होंने अपने पांव जमीन पर जमा दिए। नौजवान जो वरज़िशी भी थे बहुत जोर लगा-लगा कर थक गये, लेकिन महाराज का जमाया हुआ पांव उठा नहीं सके।

2. गुजरांवाला में महाराज ब्रह्मचर्य पर व्याख्यान देते हुए एक दिन कहने लगे कि ब्रह्मचर्य में बड़ा बल होता है। अतः चैलिंज कर दिया कि मेरी

आयु इस समय 41 साल की है मैं अपना हाथ ऊपर उठाता हूं कोई मेरा हाथ झुका देवे। इस वक्त 500-600 पुरुषों की हाजिरी थी। और गुजराँवाला के मशहूर कश्मीरी पहलवान भी मौजूद थे लेकिन किसी में भी स्वामी जी का चैलिंज मंजूर करने की हिम्मत न हुई। और स्वामी जी का खड़ा हुआ हाथ किसी ने नीचा न किया।

3. उसी गुजरांवाला में स्वामी जी स्नान करके अपनी कौपीन निचोड़ कर आ रहे थे कि रास्ते में कश्मीरी पहलवानों का अखाड़ा आया। स्वामी खड़े होकर देखने लगे। फिर कहने लगे कि मैं अपनी कौपीन नहा कर निचोड़ कर लाया हूँ। आप में से कोई पहलवान ऐसा है जो इसमें से एक बूंद पानी की निकाल सके। एक दो पंहलवान आगे आये और अपना पूरा जोर लगाकर भी कौपीन से एक बूंद पानी का न निकाल सके।

महर्षि दूसरी सब विद्याओं की तरह इस विद्या में भी पूर्ण विद्वान थे।

दिन और रात्रि के सन्धि में अर्थात् सूर्योदय और अस्त समय में परमेश्वर का ध्यान और अग्निहोत्र अवश्य करना चाहिये।

पेज 25 का शेष..........

उन्होंने समाज को कई दिलजले निष्काम सेवक दिये। आपने राज्य के हिन्दुओं को निर्भय बना दिया। होली व विजयादशमी पर उदगीर में आपने ही पहली बार नगर-कीर्तन निकाले। इसी से जलभुन कर मतांध मुसलमानों ने आपके घर पर आक्रमण किये। उनके बलिदान पर कभी हमने लिखा था-

भावों की भीषण ज्वाला को सीने में
कौन दबा सकता?
अलबेले दृढ़ संकल्पी को रस्ते से कौन
हटा सकता?

अपने एक और गीत की इन पंक्तियों के साथ लेखनी को विराम देते हैं।

श्याम ने विषपान कर जब दी उसे
श्रद्धाञ्जलि।
फिर उठी हुँकार कर सन्तान
श्रद्धानन्द की।।
जानता इतिहास सारा शान श्रद्धानन्द की।
खोजते हैं कान मेरे तान श्रद्धानन्द की।।

मातृभूमि के लिए राज्य की मुक्ति के लिए पीड़ित व शोषित प्रजा के लिए दक्षिण भारत के पाँचों प्रदेशों में कारागार में वीरगति पानेवाले एकमात्र लोकनायक भाई श्यामलालजी को हमरा शत-शत नमन।

हैदराबाद के जननायक हुतात्मा भाई श्री श्यामलालजी

(हैदराबाद आन्दोलन स्मृति शेष)

लेखक- राजेन्द्र जिज्ञासु

पिछले अंक का शेष........

दत्तात्रेयप्रसाद जी शव प्राप्ति के लिए अड़ गये। इतने में कलेक्टर को जेलों के अधीक्षक का तार मिला कि शव आर्यों को दे दो और पुलिस की गाड़ी में शोलापुर पहुँचा दो। दत्तात्रेयप्रसादजी के साथ शव पुलिस की गाड़ी में शोलापुर को चल पड़ा शोलापुर निजाम राज्य में नहीं था। तीव्र गति से यह गाड़ी दौड़ रही थी। जेल से हैदराबाद सूचना भेजवाई गई कि शव शोलापुर भेजा जा चुका है।

हैदराबाद में इस समाचार को पाकर सरकारी क्षेत्रों में खलबली मच गई। यह क्या यह तार किसने दिया? सरकार का तो कोई ऐसा निर्णय नहीं था। वर्षों के पश्चात् इस रहस्य पर से पर्दा उठा कि यह तार पं० रुचिरामजी ने दिया था। वह राज्य की गुप्त नीतियों का पता लगाने के लिए वहाँ गुप्तचर के रूप में काम करते थे। आर्यसमाज को इस संग्राम में, संघर्ष में जो विजय प्राप्त हुई इसका बहुत-सा श्रेय पं० श्री रुचिरामजी को प्राप्त है। यह घटना हमने बहुत संक्षेप से दी है। श्री कृष्णदत्त जी ने तथा इन पंक्तियों के लेखक ने अपनी कुछ पुस्तकों में इसे विस्तार से दिया हैं हमने पण्डित श्री रुचिरामजी के श्रीमुख से ही इसका प्रामाणिक और विस्तृत विवरण प्राप्त किया था।

शोलापुर की ओर शव लेकर पुलिस की गाड़ी चली तो बीदर जेलवालों को हैदराबाद से आदेश दिया गया कि गाड़ी रोको, परन्तु अब पक्षी हाथ से निकल चुका था। शोलापुर मे उस समय आर्य महासम्मेलन की तैयारियाँ हो रही थी वीरोचित रीति से हुतात्मा का दाहकर्म किया गया। पूजय महात्मा नारायण स्वामीजी ने चिता को अग्नि देते हुए ककहा, ''अब हमारे धीरज का बाध टूट गया है।''

डॉ० नीलकण्ठजी ने शोलापुर में शव की परीक्षा करके डॉक्टरी रिर्पोट दी डॉक्टरी रिर्पोट से निजाम सरकार की सारी पोल खुल गई।

श्यामलालजी का बलिदान आर्यसमाज के इतिहास की एक गौरवपूर्ण घटना है। उन्होंने वेदप्रकाशजी के बलिदान पर हत्यारे से कहा था कि एक वर्ष में इसका परिणाम देख लेना। उन्होंने अपना बलिदान देकर यह परिणाम दिखा दिया। श्यामलालजी का हृदय पवित्र था। उनका जीवन निर्मल था। वे कर्मझयता की मूर्ति थे। ईश्वर, वेद व ऋषि दयानन्द के प्रति उनकी श्रद्धा को शब्दों में नहीं बताया जा सकता। उनकी कथनी-करनी एक थी। वे शूरता-वीरता की जीती-जागती प्रतिमा थे।

- शेष पेज 24 पर

आया है, वैदिक सिद्धान्तों व आर्य समाज के विकास का स्वर्णिम अवसर सम्पूर्ण आर्य जगत् को भारत सरकार से निम्न प्रस्ताव भेजने चाहिए।

लेखक- पं० उम्मेद सिंह विशारद वैदिक प्रचारक

आर्य श्रेष्ठ सन्यासियों वानप्रस्थियों, विद्वानों एवं नेतृत्व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभाओं के पदाधिकारियों व प्रसिद्ध उद्योगपतियों से विनम्र निवेदन है कि वैदिक सिद्धान्तों के लिये महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, पं0 लेखराम आदि मनीषियों ने अपना जीवन बलिदान कर दिया था। उनका ऋण हम आर्यों के ऊपर है। आज का वर्तमान समय हमारे अनुकूल हो सकता है। आज में अपनी हटधर्मी, पदवाद, सम्पत्तिवाद, आपसी कलह द्वेष भावना को समाप्त करके, एक सार्वदेशिक सभा एक प्रतिनिधि व उपप्रतिनिधि सभा बनानी होगी। आज सन्ध्या के मंत्र **योऽस्मान द्वेष्टियं वयं द्विष्मष्टंवो जम्भे दधमः** जो रोज वांचते हैं, उसको सार्थक करने का समय आ गया है और यज्ञ में जिस मंत्र की आहूति देते हैं। वह **विश्वा द्वेषांसि प्र मुमग्ध्यस्मत स्वाहा** को क्रियात्म करने का अवसर आया है। आइए हम एक रूपता मे संगठित होकर भारत सरकार से निम्न माँगों का प्रस्ताव करें-

क्योंकि भारत के प्रधानमंत्री आदरणीय मोदी जी अधिकांश वैदिक सिद्धांतों से परिचित हैं व आर्य समाज द्वारा राष्ट्रीय बलिदान व समाज सुधार के कार्यों को भी जानते हैं।

प्रस्ताव नं0 1

आर्य बाहर से भारत में आये, शिक्षा क्षेत्र में पाठ्यक्रम से हटाने का प्रस्ताव टिप्पणी- 1857 से 1947 तक राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में महर्षि दयानन्द की प्रेरणा व आर्य समाज से प्रेरित लाखों वीरों ने अपना बलिदान दिया था, तत्कालीन अंग्रेज गवर्नर लार्ड मैकाले ने उस समय दुहरी चाल चली। वह जानता था कि आर्य समाजी राष्ट्रभक्त, ईश्वर भक्त, चरित्रवान व सदाचारी होते हैं। आर्यों को अन्य भारतीयों के निगाहों से गिराना चाहिए। एक तीर से दो शिकार उसने करने की सोची। उसने शिक्षा पद्धति में पाठ्यक्रमों में लगा दिया कि आर्य भारत में बाहर से आये हैं, कितना सफेद झूठ व गहन षड्यन्त्र था, जो कालान्तर में फलीभूत हुआ और आज तक वह कलंक इतिहास के काले पन्नों में चल रहा हैं व आर्य समाज के माथे पर दाग है। आर्य अर्थात् सम्पूर्ण भारतवासियों की यह जन्म भूमि, कर्म भूमि और धर्मभूमि है। सभी महापुरूषों ने इसी धरती पर जन्म लिया है।

प्रस्ताव नं0 2

सत्यार्थ प्रकाश 11 सम्मुलासों को एक जिल्द में भारत में पाठ्यक्रम में लाना होगा-

टिप्पणी : महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने मानव मात्र को, आदर्श, मनुष्य, चरित्रवान, संस्कारवान, राष्ट्रभक्त, पितृ भक्त व ईश्वर भक्त बनाने के लिये कालजयी ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश 1874 में लिखा था और आर्ष क्रान्ति का मूल श्रोत सत्यार्थ प्रकाश में 377 आर्ष ग्रन्थों का उदाहरण व 1542 वेद मंत्रों के उदाहरण दिये हैं। इसमें 11 सम्मुलासों में आर्ष वैदिक धर्म, आर्ष राष्ट्र नेतृत्व, आर्ष संस्कार व आर्ष ईश्वर भक्ति की शिक्षायें हैं, जो सम्प्रदायिक नहीं है अपितु सम्पूर्ण मानव मात्र के लिये है। यदि सत्यार्थ प्रकाश भारत के शिक्षा पद्धति में शामिल हो गया तो कालान्तर में भारत का इतिहास बदल जायेगा।

प्रस्वाव नं0- 3

राष्ट्र प्रपितामह महर्षि दयानन्द सरस्वती के जन्म दिवस पर राष्ट्रीय अवकाश घोषित करना चाहिए। वैकल्पिक अवकाश समाप्त करना चाहिए।

टिप्पणी- ईश्वरीय वाणी वेदों की ओर लौटाने वाले और आर्ष सिद्धांतों के प्रतिपादन एवं राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के मूल स्रोत महर्षि दयानन्द सरस्वती जी थे और सम्पूर्ण धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक भ्रष्टाचारों को समाप्त करने हेतु उन्होंने अपना जीवन बलिदान दिया था। भारत सरकार को ऐसे युग पुरूष को प्रथम पंक्ति में रखना चाहिए। हमारी जोरदार मांग होनी चाहिए।

प्रस्ताव नं0- 4

देवी देवताओं के नाम पर निरीह पशुओं की बलि कानूनन बन्द होनी चाहिए-

प्रस्ताव नं0- 5

सम्पूर्ण भारत में शराब बन्द होनी चाहिए या शराब इतनी महंगी हो, जिसको सामान्य व्यक्ति पीने की सोच भी न सके तथा बीड़ी, सिगरेट, गुटका, तम्बाकू पर भारी टैक्स लगना चाहिए।

प्रस्ताव नं0- 6

सम्पूर्ण भारत में चल रहे DAV कॉलेजों को नियन्त्रण व शिक्षा संस्कार पूर्ण रूप से आर्य नेतृत्व के नियन्त्रण में देना चाहिए और मान्यता भारत सरकार की होनी चाहिए।

प्रस्ताव नं0- 7

सह शिक्षा व वेलिंटाइन डे आदि पाश्चात्य संस्कारों से ओत प्रोत कार्यों पर प्रतिबन्ध लगना चाहिए।

आर्य नेतृत्वों से निवेदन

1. वर्तमान में हमें योग ऋषि स्वामी रामदेव जी के साथ सम्पूर्ण आर्य समाज को एकरूपता करनी होगी।

2. आर्य समाज को स्वयंवर विवाह सामूहिक विवाह के आयोजन करने चाहिए।
3. विष वेल की तरह फैल रहे धार्मिक अन्धविश्वास, जैसे भागवत कथाएं, माता जागरण के विचारों को रोकने के लिए बड़ी लकीर खींचनी होगी अर्थात् व्यापक रूप में वेद कथाओं का आयोजन करने होंगे।
4. उच्च कोटि के आर्य सन्यासियों की एक धर्म सभा बनानी चाहिए और सम्पूर्ण आर्य जगत उसी सभा के नेतृत्व मे अपनी-अपनी सभाओं द्वारा कार्य करें।
5. आर्य समाजों को केवल यज्ञ याग में ही न लिपटकर चारदीवारी से बाहर आकर वेद प्रचार करना होगा।
6. आर्य समाजियों को अपने नाम से जातिवाचक शब्द हटाना होगा और प्रयास करें कि आर्य परिवारों में ही आपसी विवाह सम्बन्ध होने चाहिए।
7. सम्पूर्ण आर्य जगत की सार्वदेशिक व प्रतिनिधि सभा व अन्य सभाओं को भंग करके एक-एक नेतृत्व देना चाहिए।

संग्राम है, जिन्दगी लड़ना इससे पड़ेगा।
जो लड़ नहीं सकेगा, आगे नहीं बढ़ेगा।

कविता

मेरा जीवन तेरे हवाले प्रभु

मेरा जीवन तेरे हवाले प्रभु।
इसे पग-पग तू ही संभाले ।।
मेरा जीवन .... ।।

भव सागर में जीवन नैया।
डोल रही न है कोई खिवैया ।।
इसे अब तू आ के बचा ले प्रभु।
इसे पग-पग .... ।।

मोह माया के बन्धन खोलो।
हे प्रभु अपनी शरण में ले लो।।
इस किन्वन को अब अपना ले, प्रभु।
इसे पग-पग............ ।।

यह जीवन है तुमसे पाया।
सब तेरे नहीं कोई पराया ।।
मुझ को भी तू अपना ले, प्रभु
इसे पग-पग .... ।।

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

पूर्व नाम- श्री शिवधर आर्य (स्मृति शेष)

(1) जन्म फरवरी 1931 ई॰ (2) 39 से 49 ई॰ तक विद्यार्थी जीवन (3) 51 से 62 ई॰ तक आर्य प्रतिनिधि सभा पटना (बिहार) लिपिक एवं भजनोपदेशक (4) 63 से 72 ई॰ तक गया जिला आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रचार (5) 71 से 74 तक मंत्री, आर्य समाज व्यापुर, पटना (6) 73 से 75 तक आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ नागपुर (महाराष्ट्र) (7) 76 से 78 स्वतन्त्र भजनोपदेशक प्रचार (8) 79 से 84 आर्य प्रतिनिधि सभी कलकत्ता (बंगाल) (9) 85 से 93 तक बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल, मध्यप्रदेश, उड़ीसा, गुरुकुल वेद व्यास राऊरकेला (उड़ीसा) स्वतंत्र प्रचार (10) 94 से 99 तक आर्य प्रतिनिध सभा उड़ीसा गुरूकुल आश्रम आमसेना (नवापारा) (11) 1994 ई॰ में में वानप्रस्थ की दीक्षा प्राप्त द्वारा- श्री स्वामी धर्मानन्द सरस्वती आचार्य गुरुकुल आमसेना (12) दार्जिलिंग, सिलीगुड़ी, विजनवाड़ी उत्सव प्रचार (13) वाराणसी, लखनऊ, बाराबंकी, बहराइच, गोड्डा आदि (उत्तर प्रदेश) (14) रायपुर, विलासपुर, भिलाई नगर, दुर्ग, जबलपुर, रीवा, जगदलपुर, भोपाल आदि (मध्य प्रदेश) (15) नेपाल-जीतपुर, भेरीहारी, सहवइढ़वा, बलुआ (पर्सा) बिराटनगर वीरगंज (नेपाल) (16) कई स्थानों में शुद्धि समारोह में सम्मिलित हो चुके हैं (18) सैंकड़ों आर्य समाज की स्थापना कर चुके हैं (18) लगभग पचास हजार भजन संग्रह कर पुस्तक प्रकाशन करा चुके हैं (19) 1975 ई॰ में आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह दिल्ली (20) 1983 ई॰ ऋषि निर्माण शताब्दी समारोह अजमेर (राजस्थान) (21) 1991 ई॰ से वैदिक धर्म प्रचार संघ के मंत्री (22) 1998 ई॰ पं॰ लेखराम बलिदान शताब्दी समारोह गुरुकुल इन्द्र प्रस्थ, फरीदाबाद (हरियाणा) (23) 16 अगस्त 99 से 6 सितम्बर 99 तक प्रचार आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द मार्ग, सुलतान बाजार, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश) द्वारा प्रचार एलारिडी, पीटलम, बोधन वांसवारा (निजामाबाद) नारायण पेट (महबूब नगर) (24) फरवरी 2000 हीरक आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश व विदर्भ, नागपुर (महाराष्ट्र) स्थापना शताब्दी समारोह (26) 6 से 9 अप्रैल 2000 हीरक जयन्ती आर्य समाज रक्सौल (पूर्वी चम्पारण)

बिहार (27) अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन मुम्बई में 23 से 29 मार्च 2001 में सम्मिलित (29) 4 फरवरी 2008 को गुरुकुल आश्रम आम सेना, भाया-खरियार रोड, जिला-नवापारा (उड़ीसा) के वार्षिक महोत्सव के शुभ अवसर पर डा० सोमदेव शास्त्री मुम्बई के ब्रह्मत्व में स्वामी धर्मानन्द सरस्वती से सन्यासी का दीक्षा लेकर स्वामी शिवानन्द सरस्वती बनें। (28) 27 मार्च 2007 को ब्यापुर, लोदीपुर (पटना) के ब्रह्मचारी महेश कुमार आर्य का नाम गुरुकुल आम सेना (उड़ीसा) में लिखा दिये हैं। (29) डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल वैदिक चेतना शिविर सासाराम, खगौल, आरा, बक्सर में भजन उपदेश सुना चुके । आर्य समाज मन्दिर बेली रोड, दानापुर में समय-समय पर भजन सुनाते रहे। (30) महात्मा आनन्द स्वामी, स्वामी ओमानन्द सरस्वती, प्रकाशवीर शास्त्री, शान्ति प्रकाश जी, स्वामी अभेदानन्द जी आचार्य, पं० रामानन्द शास्त्री पं० गंगाधर शास्त्री आदि कई विद्वानों के साथ प्रचार कर चुके।

मेला प्रचार

कार्तिक पूर्णिमा के शुभ अवसर पर बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना के तत्वाधान में आर्य समाज सोनपुर के प्रांगण में भव्य वेद प्रचार महोत्सव का आयोजन आप सभी आर्य जन सादर आमंत्रित है। (तन-मन-धन से सहयोग प्रदान करें। -सभा मंत्री

वेद प्रचार

आर्य समाज व्यापुर पटना के द्वारा श्रावणी पर्व के अवसर पर श्रावण पूर्णिमा से श्री कृष्ण जन्माष्टमी तक भव्य रूप से वेद प्रचार का आयोजन किया गया। इस अवसर पर वैदिक विद्वान पं० संजय सत्यार्थी, पटना को प्रवचन के लिये तथा पं० जितेन्द्र देव आर्य, बरेली, को भजनोपदेश के लिए आमंत्रित किया गया। एक ओर जहाँ सत्यार्थी जी ने प्रवचन के साथ काव्यपाठ कर श्रोताओं को आन्दोलित किया वहीं देव जी ने भजनो के द्वारा श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। व्यापुर आर्य समाज के लिये यह पहला अवसर था कि यहाँ आठ दिवसीय वेद कथा का आयोजन किया गया साथ ही भारी वर्षा के बाद भी लोगों में कथा सुनने की उत्कण्ठा बनी रहती थी और कथा प्रारम्भ होते ही सभा खचाखच भर जाती थी। प्रातः कालीन सत्र में भिन्न-भिन्न घरों में पारिवारिक सत्संग के माध्यम से जीवन के स्वर्णिम सूत्रों को समाझाया गया। इस कार्यक्रम से युवकों में उत्साह का संचार हुआ।

-विजय कुमार सिंह, मंत्री

शोक-समाचार

बिहार के जाने-माने सुप्रसिद्ध आर्य समाज के मिशनरी प्रचारक श्री स्वामी शिवानन्द पूर्व नाम शिवधर आर्य जी का देहान्त 18 जून 2014 को अक्समात अपने निवास स्थान व्यापुर पटना में हो गया । उनका अंतिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से उनके एकमात्र पुत्र सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक प० सत्यप्रकाश आर्य जी द्वारा किया गया, जिसमें आर्य समाज व्यापुर के समस्त पदाधिकारी और सभासद् गण उपस्थित हुए। श्री शिवधर आर्य जी पुराने पीढ़ी के समर्पित भजनोपदेशक थे, उनकी मृत्यु से आर्य जगत् को अपूर्णीय क्षती हुई है।

अविभाजित मध्यप्रदेश के निर्विवाद आर्य नेता

दिवंगत रमेशचन्द्र श्रीवास्तव : पुण्य स्मरण

स्व० श्रीवास्तव जी से प्राय: सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के वार्षिक अधिवेशनों में भेंट होती थी। वे अविभाजित मध्य प्रदेश की सभा के मंत्री थे और उस समय इस सभा में विदर्भ और नागपुर का क्षेत्र भी था। मध्य भारत में देशी रियासतें थी। उन दिनों रमेश जी में नया उत्साह, नई उमंग, नवीन प्रेरणाएँ, हिलोरें लेती थी। इस स्नेह मिलन का कोई न कोई शुभ परिणाम निकलना ही था और यह हमारे स्नेह सम्बन्ध के रूप में प्रस्फुरित हुआ। उनकी सुपठित, सुशिक्षित, रूप गुण सम्पन्न कन्या मेरे घर में पुत्र वधू में बन कर मंगलों की वर्षा करती आई।

विगत् वर्षों में आर्य प्रतिनिधि सभा मध्य प्रदेश के मंत्री तथा बाद में प्रधान के पद आपने जिस योग्यता तथा कौशल से निभाया, वह निश्चय ही प्रेरणाप्रद था। उन्होंने प्रान्तीय सभा की परिसम्पतियों का संरक्षण ही नहीं किया, उसे बढ़ाया। इसके कारण वर्तमान छत्तीसगढ़ स्थित प्रतिनिधि सभा के तत्वाधान में अनेक शिक्षण संस्थान चल रही थीं, उनका योग्यतापूर्वक संचालन भी वास्तव में निष्ठापूर्वक करते रहे हैं। मुझे उनके इस कार्यकाल में दुर्ग, भिलाई बिलासपुर तथा रायपुर आदि नगरों में प्रचारार्थ जाने का अवसर मिला और मैंने देखा कि उनकी कार्यक्षमता तथा सेवा भाव सर्वत्र हो रहा है। उनके कार्यकाल की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि हैं दुर्ग में दयानन्द परिसर तथा आर्य नगर के व्यावसायिक केन्द्रों का निर्माण और विकास। पारिवारिक यज्ञों और सत्संगों को सफल बनाने में उनका योगदान कितना महत्वपूर्ण रहा है यह हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। विगत् कुछ समय से अनेक कठिन रोगों के दुष्चक्रों में घिरे रहे जो अन्त: घातक सिद्ध हुआ। मेरा उनका सम्बन्ध तो बहुआयामी रहा। उसमें जहां सामाजिक, धार्मिक कार्यक्रम आते थे, साथ ही पारिवारिक सम्बन्धों की मधुरता भी थी। वे मुझसे आयु में छोटे थे। उनका वियोग परिवार के अतिरिक्त एक सामाजिक क्षति भी है। परमात्मा उन्हें चिर शान्ति प्रदान करें।

- डॉ. भवानीलाल भारतीय

315, शंकर कॉलोनी, श्री गंगानगर

वैदिक धर्म की जय!

महर्षि दयानन्द की जय!!

गुरुकुल आश्रम आमसेना में नैष्ठिक दीक्षा लेकर दो नवयुवकों ने किया आजीवन समाज सेवा का संकल्प।

आज पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर भारतवर्ष भी अपनी प्राचीन संस्कृति, सभ्यता, भाषा, संस्कार तथा आदर्श को भूलता जा रहा है, आज के नवयुवक-नवयुवतियां भी इसी रंग में रंगकर भेड़चाल में चलते जा रहे हैं। इसी दुर्दशा को देखते हुए पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती ने हरियाणा प्रान्त से आकर ओड़िशा प्रान्त के एक अकालग्रस्त कालाहाण्डी (वर्तमान नुआपड़ा) जिले में गुरुकुल आश्रम आमसेना नामक बृहद् संस्था की स्थापना की। आज इस गुरुकुल से अन्य 18 संस्थाएं संचालित है।

स्वामी जी ने अपने प्रभाव से अनेक नवयुवकों को नैष्ठिक दीक्षा देकर देश, धर्म की रक्षा का संकल्प करवाया है तथा सभी नवयुवक स्वामी जी के निर्देशानुसार कार्य कर रहे हैं। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए गत 10 अगस्त को ब्र. राकेश कुमार आर्य तथा ब्र. प्रवीण आर्य (पुनीराम) ने श्रावण पूर्णिमा (रक्षाबन्धन) के दिन आजीवन नैष्ठिक ब्रह्मचर्य की दीक्षा लेकर अपना सर्वस्व देश को सौंप दिया। इस गरिमामय कार्यक्रम में स्वामी धर्मानन्द सरस्वती, स्वामी व्रतानन्द सरस्वती, डॉ. कुञ्जदेव मनीषी एवं बहुत से विद्वान् एवं अतिथिगण उपस्थित थे। अन्त में स्वामी धर्मानन्द जी ने दोनों ब्रह्मचारियों के इस साहसिक कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

जो मनुष्य जिस बात की प्रार्थना करता है उसको वैसा ही वर्तमान करना चाहिये अर्थात् जैसे सर्वोत्तम बृद्धि की प्राप्ति के लिये परमेश्वर की प्रार्थना करे उसके लिये जितना अपने से प्रयत्न हो सके उतना किया करे। अर्थात् अपने पुरुषार्थ के उपरान्त प्रार्थना करनी योग्य है।

वेद परमेश्वरोक्त हैं इन्हीं के अनुसार सब लोगों को चलना चाहिये और जो कोई किसी से पूछे कि तुम्हारा क्या मत है तो यही उत्तर देना कि हमारा मत वेद, अर्थात् जो कुछ वेदों में कहा है हम मानते हैं।

- सत्यार्थप्रकाश समुल्लास

मानव समाज तक पहुँच जायेंगे जो अमैथुन सृष्टि से आरम्भ हुआ। प्रश्न होता है कि उनको ज्ञान कहाँ से मिला? इसका समाधान महर्षि पतंजलि ने योगदर्शन 1.26 में किया है- इस पूर्वेषामपि गुरु कालेनानवच्छेदात्' वह अनादि परमेश्वर गुरूओं का भी गुरू है। सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य को शिक्षा देने वाले जब कोई माता-पिता और गुरू नहीं थे, तब उस दयालु प्रभु ने ही अपना ज्ञान ऋषियों के हृदय में प्रकट किया और तब से जान की यही अजस्त्र धारा बहती चली आ रही है।

आज की पाश्चात्य शिक्षा मनुष्य को मजदूर बनाती हैं, चाहे कितना ही धन कमा ले वह मजदूर ही रहेगा परन्तु वेद का ज्ञान हमें स्वामी बनाना है धर्म-अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धी का मार्ग बतलाता है परम आनन्द को प्राप्त कराता है। वेद के बिना मानव केवल स्वार्थ का पुतला बनकर रह जाता है। वेद में जीवन है वेद में प्राण है वेद में ही मानव का कल्याण और ईश्वर भक्ति की राह दिखाई देती है। हमारा जीवन प्रति पल वेद से सरावोर हो हम जब प्रातः काल उठते हैं तो वेद मंत्र का पाठ करते हैं, स्नान करते हैं, तो वेद मंत्र का पाठ करते हैं, संध्या-यज्ञ करते हैं तो वेद मंत्र का पाठ करते हैं, भोजन करते हैं तो वेद मंत्र का पाठ करते है, व्यवसाय करते हैं तो वेद मंत्र का पाठ करते हैं, सोते हैं तो वेद मंत्र का पाठ करते हैं। हमारे जीवन का हर कार्य वेद से जुड़ा है, यह सब हमें महर्षि दयानन्द ने सिखाया। ऋषि ने हमें वेद से जोड़ा। संसार के अनेक देवी-देवता, महापुरूष आदि पशु-पक्षी, अस्त्र-शस्त्र आदि से जाने जाते है। परन्तु वेदोधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ही ऐसे दिव्य पुरूष हुए जो वेदों से जाने जाते हैं। वेद प्रचार ही इनके जीवन का ध्येय था। आईये ऋषि ने हमें वेदों से जोड़ा, हम ऋषि से जुड़े।

पं० संजय सत्यार्थी

सह-सम्पादक

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

सेवा में,
श्री/मेसर्स..............................
मो०..............................
पो०..............................
जिला..............................
(प्रेषिती के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

मुद्रित सामग्री

॥ ओ३म् ॥

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा

श्रीमुनीश्वरानन्द भवन, नया टोला, पटना- 4

के तत्वाधान में

दिनांक 8, 9 एवं 10 अक्टूबर 2014 को

दयानन्द बालक विद्यालय, मीठापुर

विशाल आयोजन

आर्य महासम्मेलन 2014, पटना

बिहार के आर्य विद्वानों उपदेशको, भजनोपदेशकों, सन्यासियों, आर्य वीरों, वीरांगनाओं एवं कार्यकर्त्ताओं से अनुरोध है कि तन, मन, धन से सहयोग करें और सम्मेलन में भाग लेकर पुण्य के भागी बनें।

गंगा प्रसाद
प्रधान

सत्यदेव प्रसाद गुप्ता
कोषाध्यक्ष

रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मंत्री

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा, पटना

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुदित एवं प्रकाशित।